लेखकक अन्य कृति

(१)	कुमार	उपन्यास
(२)	संन्यासी	काव्य
(३)	विडम्बना	गल्प संग्रह
(४)	श्री मद्भागवद् गीता	मैथिली-गद्यानुवाद
(५)	रुबाइयात ए ओमर खैयाम	मैथिली-पद्यानुवाद
(६)	बाभनक बेटी	बङ्गलाक अनुवाद (उपन्यास)
(७)	दू पत्र (साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत)	लघु उपन्यास
(८)	पतन	काव्य
(९)	विप्रदास	बङ्गलाक अनुवाद, प्रेसमे

प्रतीक

श्रीउपेन्द्रनाथ झा 'व्यास'

प्रतीक

श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास'

प्रकाशक –
श्री ब्रजेन्द्र कुमार झा
श्री भवन
बोरिङ रोड, पटना—१

प्रथम संस्करण

मुद्रक—
नोवेल्टी कलर प्रिन्टिग वर्कस,
नयाटोला, पटना—४
मूल्य— 15/-

मिथिला, मैथिल, मैथिलीक
अनन्य उन्नायक
स्वनाम धन्य स्व० ललित बाबूक
पुण्य-स्मृतिमे
सादर समर्पित

सूची

दू शब्द

तेरहे चौदह वर्षक अवस्थामे मिडिल स्कूलक एक पंडित जी हमरा 'ब्यास' कहए लगलाह। एहि आशीर्वादी उपनाम वा मा सरस्वतीक कृपासँ दू, तीनि वर्षक बाद हम किछु किछु कविता बनबए लगलहुँ।

१९३६ ई० मे जखन पटना अएलहुँ त सम्पर्क भेल श्रद्धेय श्री हरिमोहन बाबू एवं श्रद्धेय श्री सुभद्र बाबूसँ; क्रमहि मैथिलीक पठन एवं लेखन दिशि रुचि जागल। १९३८ मे दड़िभंगासँ स्व० रमानाथ बाबू द्वारा सम्पादित त्रैमासिक 'साहित्य पत्र' मे धारावाही रूपें प्रकाशित श्रीयुत तन्त्रनाथ बाबूक 'कीचक वध' क छन्द विशेष आकृष्ट कएलक। ओही वर्ष दुर्गा पूजाक अवसर पर मिथिला मिहिर मे प्रकाशित हुनक एक 'सॉनेट' (चतुर्दश-पदी) सेहो बढिञा लागल छल। ओहि छन्द क अनुकरण कए हम पहिल 'सॉनेट' 'सूर्य्य' १९३८ ईक मेष संक्रान्ति दिन लिखल। क्रमहि 'ब्लैंक भर्स' छन्द सेहो अपनाओल (विद्यापतिक मृत्यु ओही छन्द मे अछि) प्रस्तुत पुस्तकमे पहिल कविता ओएह चतुर्दश-पदी 'सूर्य्य' थीक।

ओही समयसँ यथा रुचि, यथा समय, कविता एवं आमोवस्तु लिखैत रहलहुँ अछि, 'नितान्त' स्वान्तः सुखाय। विज्ञान एवं अभियंत्रणाक छात्र छलहुँ; पाछाँ अभियंत्रण-सेवामे लागल रहलासँ बहुत नहि लिखल भेल अछि। ई 'मुक्तक' कविता सभ किछु त पहिलुक मिथिला मिहिरमे प्रकाशित भेल छल, एम्हर आबि '६५क बादक अधिकांश कविता आकाशवाणी सँ सेहो समय-समय पर प्रसारित भेल अछि। मित्र वर्गक

विचार भेलन्हि आ' (गत वर्षक बाढिक बाद, जखन ई सभ कहुना बाँचि गेल) अपनो विचार भेल जे एकरा सभकें एक पुस्तकमे प्रकाशित कए दी ।

सँतीस-अठतीस वर्षक दीर्घ अवधिमे रचित सभटा त नहि किन्तु बहुत किछ मुक्तक कविता एहिमे संकलित भेल अछि । विज्ञानक छात्र रहलासँ कवितामे यत्र तत्र ओकर प्रभाब पड़ब अनर्गल प्रायः नहि बूझल जाएत-यथा-संभव नूतनता, वैचित्र्य, बैविध्य एवं चमत्कारिता लएबाक चेष्टा त कवि लोकनिक रहिते छन्हि; ओ कहाँ तक सफल भेलाह, सुधी-जन बुझैत छथिन्ह ।

[परिशिष्टमे कविता सभहिक विषयमे रचनाक समयस्थान एवं आवश्यकतानुसार छोट टिप्पणी सेहो देल गेल अछि ।]

'स्वान्तः सुखाय' क सङ्ग हमर जीवनक अभिलाषा रहल अछि मातृभाषा मैथिलीक किछु सेवा करबतें कविता वा अन्य लेखन कर्म्ममे लागल रहैत छी । ई ग्रन्थ छपएबाक काल ध्यानमे छलाह मिथिला, मैथिल, मैथिलीक अनन्य सेवक एबं उन्नायक स्वनाम धन्य स्व० ललित बाबू 'ओ गाछ' शीर्षक कविता हुनके आकस्मिक निधनक बाद लिखल गेल छल । ई पुस्तक हुनके पुण्य-स्मृतिमे समर्पित अछि ।

श्रीउपेन्द्रनाथ झा

स्वतन्त्रता दिवस
१५-८-१९७६

सूर्य्य

जनिका बलपर धरिणी लए सभ भार
सीमित पथ अनुसरणशील, लए संग
मंगल बुध ग्रहगण, लाबथि बहुरंग
प्रातः, सन्ध्या, मधु-ऋतु, वर्षा, जाड़,
जाहि ज्वलित अंगारक धए आधार
अम्वर विच जनि नटी नर्त्तकक संग
सूर-बद्ध भए नाचए भरल उमङ्ग,
घूमथि तीव्र वेगसँ चक्राकार ।

जाहि तेज-पुञ्जक अबइछ किछु अंश
शक्ति भरल ज्योतिक तरङ्ग एहि प्रान्त
जीवन रूप, तथा जाइछ अश्रान्त
शेष कतए—अज्ञात ! विश्वसर-हंस !
आदि-शक्ति-भाजन, शुभ दीप्त ललाम
ज्योतिष्पदमे स्वीकृत करिअ प्रणाम ।

निर्झर-नीर

जनमि तुङ्ग गिरि रत्नक गेह महान,
सूतल परम पुनीत जननि-सुख-शान्ति
भरल कोरमे, भेल अचानक क्रान्ति
नवल हृदय विच, जागल सहसा प्राण
आर्त्तनाद सुनि, धए कर्त्तव्यक ध्यान
चलल, न आएल भारत-भारत क्लान्ति
मोह-जन्य सम्बन्ध-बन्धनक, शान्ति
पाओल थोड़ तोड़ि सभ पथ पाषाण।

सम्मुख युवती नव विटपी अति थीर,
रङ्ग विरङ्गक कुसुमक भूषण-पूर,
वंक दृष्टि, गबइत पिक पंचम सूर,
किन्तु धन्य, पद चूमि चलल ई वीर!
सहि दुख अति जग शान्त कएल सुचरित्र,
अन्त अनन्तक पथ पर परम पवित्र।

वनफूल

प्रकृति कला केरि तुच्छ अंश वनफूल—
नीरव वनमे पड़ल रहिअ एकान्त
क्रीड़ा करइत बाल्यकालसँ शान्त
शीतल सुखद समीर संग, सभ शूल
अंग-लग्न जे बूझल विधि प्रतिकूल
बिसरि जाइ' छी, अबइत अछि एहि प्रान्त
गुनगुन करइत भ्रमर जखन अश्रान्त,
कहइछ प्रिय सन्देश, मधुर सुख-मूल।

बाल-युवति-कवरी-शृङ्गारक मान
अछि नहि, सुर-शिर-भूषण हित आयास;
किन्तु एक अछि जीवन भरिक प्रयास—
करइत सतत जगत हित सौरभ दान,
अन्त समय निज मातृ-चरण-रज-लीन
त्यागि दैत छी जीवन सुरभि विहीन!

शिशिर-मेघ

आतप-आकुल-तृषित धरा अति क्लान्त;
क्रूर निदाघक नग्न नृत्य, तेहि काल
जीवन-रस दए कएल जगतकेँ शान्त
मेघ, पसारल नयन रम्य घन-जाल।
शत सहस्र जिह्वासँ कए रस पान
शस्य-पूर्ण-अंचल-युत धरा समस्त
पुलकित, गाओल चन्द्र-रश्मि सङ गान।
किन्तु आज ? मानव-कर-शोषित त्रस्त
वसुधा नग्न पड़लि नीरस असहाय।
मेघ ! उचित तुअ गर्जन, झंझावात,
शीतल-उपल-वृष्टि अरु अशनि-निपात
शिशिर-शीत-कम्पित मानव पर ! हाय !
किन्तु उदर पूर्त्तिक आगू अपमान,
कष्ट, यन्त्रणा ? किछु नहि हे भगवान !

विद्यापतिक मृत्यु

शरद समय मन भावन परम पवित्र,
चारु चन्द्रिका धवल रजनि निश्शब्द
नील गगन विच इन्दु सहित नक्षत्र
सीमित पथपर चलइत परम प्रसन्न
देखथि अपन शान्तिमय जग उपकार।

जगपालक श्री विष्णु उठल छथि आइ;
आवाहन कमलाक कएल एहि साँझ
घर घर कुल रमणी आलीपन लीखि,
पल्लव युत शुभ कलश राखि गृह द्वार।

शोभित अछि धन रात्रि शालि सम्पन्न
सकल गृहस्थ समाजक सुखमय आश।
जगती-तलपर सकल जीव आनन्द,
मन्द मन्द वह शीतल सुखद समीर
कए सौरभ शेफालिक जग-मन मोह।

सूनल कविपति विद्यापति एहि काल
देखल स्वप्न राज्य बिच योगी एक
कर त्रिशूल, भस्मावृत सकल शरीर,
बद्ध-दृष्टिसँ देखि, क्षणक उपरान्त
अपना निकट बजाए कहल—अहँ शीघ्र
जगत-मोह तजि तीर्थाटनक निमित्त
चलु कवि हमरा सङ्ग श्रेय-पथ-लीन।
निद्रा भंग भेल, कवि कएल विचार
अन्त समय अछि शीघ्र हमर, त्रिपुरारि
आएल छथि ई सूचित करक निमित्त !

जे शिव निज सेवकसँ भए अति तुष्ट,
सेवा-वृत्ति ग्रहण कए, सहि कत कष्ट
ख्याति कएल मम जग भरि, की नाहि आब
रखता' अपन शरणमे चरण समीप ?
धन्य भक्त-वत्सल शिव !
अतिशय शीघ्र
करिअ कृपा सेवक पर। ई तन तुच्छ
त्यागक हेतु मनोरथ कएल अनेक,
जहिआसँ प्रभु अहँ छोड़ल मम सङ्ग।

किन्तु अपन की साध्य, यथा आदेश
होइछ ईश ! तथा चलइछ संसार।
जन्म बिताओल देव ! अहँक गुण गाबि
यथा योग्य वाणी अनुकम्पा पाबि,
प्रेमक बीज बपन कएलहुँ एहिकाल।
रचि-रचि गीत अनेक जकर फल मुक्ति,
होएत निश्चय ज्ञान विवेकक सङ्ग।
किन्तु अल्प-मति समुदायक यदि हानि
होएत ईश ! कविक की एहिमे दोष ?
जकर हृदयसँ बहराइछ अनजान
कविता, सरिता निस्सृत हो गिरि छोड़ि
दोष रहित, पुनि जाए अनेको प्रान्त
जीवन रूप, किन्तु थल कुत्सित पाबि,
जन-जीवन नाशक कारण जनु होअ !
एहि विधि सोचथि मन मन करथि प्रणाम,
आत्मविभोराम्बुधिमे कखनहुँ मग्न,
कएल व्यतीत कतहु खन, जखन सुरम्य
प्राची कुंकुम-राग-रंजिता भेलि।

मलय पवन अति शीतल करसँ स्पर्श,
कएल शुभ्र शेफालिक कोमल अंग—
खसल जाए धरणीक अंक सुकुमारि।
कएल विहग कलरव, अरु अलिकुल वृन्द
आकुल भए निज प्रेयसि सन्निधि जाए
कएल करुण क्रन्दन-सम्प्रति अति ह्रास,
क्षीणकमलिनी-वदन अश्रु-युत देखि ।
पौछल करसँ अश्रु-बिन्दु ओहि काल
भानु; प्रफुल्लित सरोजनीक समस्त
मुख मंडल भए गेल—यथा अति क्षीण,
मृत शय्या पर पड़लि परम सुकुमारि
पाबि विदेश समागत पति-कर-स्पर्श,
होइछ परम प्रसन्न सहित मृदु-हास।
आएल कत जन प्रातहि कविक समीप;
कहलन्हि शान्त-चित्त, सभकेँ बैसाए—
(अपन पुत्र हरिपति छलथिन्ह तत ठाढ़)
......"करिअ हमर अन्तिम कालक ओरिआओन"....
जाएब हम जननी सुर-सरिता-तीर....

सभ किछु कए समतूल चलक अछि शीघ्र"
ई सुनतहि सभ लोकक लोचन देखि
अश्रु-पूर्ण, बजलाह—"न कानक काज
संसारक त'अछि नियमे एहि रीति!
....हमरा सन अछि भाग्य ककर जग भेल?
पूर्ण आयु, नहि रोगक कोनो अंश,
भोग कएल अति, मिथिलाधिप सन मित्र!
....सभ लोकक एहि लोक बीच अछि कर्म्म,
कर्म्म-वीर भए जीवन सफल बनाए,
अन्तिम समय मिलए ओहि शक्ति अनन्त।
हम शिव शंकर कृपा पाबि सभ सौख्य
पाओल सभ विधि। की नहि श्वेत-सुकेतु
हमर यशक एहि देश विच फहराए!
.... दुःख एक हियमे रहि गेल विशेष
नहि मम तनय, न आन केओ हो भान
सम्प्रति जे परिबोधत मिथिला माए
पोछत हुनकर नोर हमर उपरान्त।
....अछि नहि मालाकर एतए एहिकाल

जे राखत उद्यान मैथिलिक रम्य
साहित्यक रस सीँचि-सीँचि, नव पद्य
गद्य-गीति-समनक कोमल कमनीय
माला रचि पहिराओत, पूजत देवि
भारत-भारतीक पद कमल ललाम"" ।
किन्तु अपन की साध्य ! भविष्यक डोर
छथि धएने ओ सर्वश्रेष्ठ भगवान,
जनिकर इङ्गितिसँ चलइछ संसार ।
"...जाउ अहाँ सभ, नहि विलम्बकेरि काज
गङ्गा-तट चलबा' ले' होउ सयत्न" ।
आगाँ आगाँ कविक पालकी श्वेत,
पाछाँ विसपी ग्रामक जन समुदाय—
की बालक, की वृद्ध, नारि सभ लोक
शोकाकुल भए चलल, अश्रुयुत नेत्र ।
मृग-शावक जे छल कविपति-उद्यान,
चलल दौड़ि, कत पोषित कीर कपोत
पालकीक ऊपर उड़ि चलइछ सङ्ग ।
क्रमशः बढ़इछ नर-नारी क समाज ।

जे सूनथि ई बात, आँखि भरि नोर—
चलथि पाछु ऋषि-तुल्य कविक सङ आज;
जे अक्षम, से कनइत करथि प्रणाम
पावि सान्त्वना रहि न सकथि ओ धीर।
चलईत, बहइछ जनधाराक प्रवाह—
किन्तु प्रसन्न-चित्त अरु सस्मित-आस्य,
कविपति केरि अछि आज; यदपि दुइ नेत्र
स्मिमित तथापि जह्नु-तनयाकेँ देखि,
हृदय वीच, ओ कत वेरि करथि प्रणाम ।
चलइत चलइत राति अधिक भए गेल—
देखि सभहिकेँ श्रान्त, तखन कविश्रेष्ठ,
पूछल—'अछि जननीक कोर कत दूर ?'
एक कोस वा डेढ़ कोस—ई सूनि,
पतित-पाविनी दिशि कर जोड़ि, तुरन्त
स्थगित कएल यात्रा ओ दए आदेश—
की यदि जननि-शरण जएवाक निमित्त,
पुत्र आबि कए रहि जाएत किछु दूर
क्लान्ति श्रांन्ति-वश, आतुर शिशुक पुकार

पहुँचत की नहि ओतए, अन्ब केरि दृष्टि
पड़त न सन्तानक ऊपर, की आबि
रक्षा नहि करतीह तनय दुख देखि ?
सूतल सभ जन, किन्तु न कवि-पति नेत्र
भेल निमीलित पल भरि। सुरसरि धार
क्रमशः सन्निधि अबइत देखि प्रसन्न,
परम पूत जल कल-कल छल-छल शब्द
सूनि समीपहि, दृष्टि पड़ल विच धार—
धवल चन्द्रिका धौत एक अति दिव्य,
शुभ्र-वसन-तन स्फटिक समुज्वल देवि
जलसँ ऊपर ऊठि, देखि किछु काल
पुनि भेलीह जलमग्न। हर्ष सँ भेल
पुलकित सकल शरीर, झंकृता भेलि
हृतन्त्री, अह निनाद स्तुति संगीत
कवि-मुखसँ, जे लए तरङ्ग-युत वायु
जाए मिलल जल कलकलसँ ओहिकाल।
× × ×
प्रत्यूषहिं ऊठल सभ जन, पुनि देखि

अति समीप जाह्नवी धार अति क्षुब्ध,
शीघ्र जाए मार्जन कए कवि लग आबि,
आश्चर्य्यान्वित कहए परस्पर लोक—
महाकविक महिमा अरु करुणापूर्ण
जगत-पाविनी गङ्गा-गुण-गण-गान।
प्रातःस्नान कएल सभ; कविपति जाए
पुत्री निकट कहल—"दुल्लहि तोर माए,
छथुन्ह कतए ? ओ आबथु एखन नहाए।...."
तखन....सभहिँकेँ दए अन्तिम सन्देश,
जल विच जाए कएल मज्जन, अतिहृष्ट।
पूजा कएल जलहिं विच विष्णु महेश,
गाबि सुनाओल निज दुइ गीत पुनीत;
कएल प्रार्थना मौन 'शीघ्र हे देव !
राखिअ दास बनाए चरण लग आब।'
पुनि दए डूब जहाँ अएला कवि तीर,
उज्ज्वल सिकता ऊपर हुनक शरीर
खसल ततए निश्चेष्ट। सकल परिवार,
आबि पिआओल गंगाजल। अविलम्ब,

खूजल आँखि, बढ़ाओल कविवर हाथ
जननी-जल दिशि, भेल जखन संस्पर्श,
हास्य-चिह्न-युत-वदन हुनक ओहिकाल
भेल प्रसन्न, यथा शिशु माएक कोर
सूतल, उठइछ पिवतहिँ जननी-दुग्ध,
अरु निज कोमल करसँ अम्वक अङ्ग
परसि, परम आनन्दित हो मृदु-हास
पूर्ण-अधर-युत मुख, जे करइछ मन्द
बाल-इन्दु-मंडल सह-क्षीण-प्रकाश ।
वैतरिणी आदिक सभ बिधि सम्पन्न
भेला पर, सभ लोकक दिशि कवि हेरि,
दृष्टि उठाओल जल ऊपर एक बेरि
शून्य गगन मे; नेत्र निमीलित भेल—
हाथ उठाओल ऊपर, ऊठल अंग,
ऊर्ध्व गमन कएलन्हि कवि तजि संसार।
क्षीण तरणि कर, वायु क्षीण गति भेल,
गङ्गाजल कल कल करइत चल गेल।

हरिद्वार

१

देखल हम जहिआ हरिद्वार !
औ परम-पूत रमणीक भूमि
सुरलोक - गमन - पथ - प्रथम - द्वार,
जत' होइछ कल-कल नाद सहित
निस्सृत गिरिसँ सुरसरिक धार।
किन्तु श्याम हरित तृण लता राजि-
रोमावलि-युत अछि गिरि अशेष
अति श्याम वर्ण, विकराल काय,
के कहत हृदय हिनकर विशेष—
उज्ज्वल तुषारमय, अति पवित्र,
जे द्रवीभूत भए करए शान्त
सलिला - जलसँ निज चरण प्रान्त-
-रक्षित देशक ज्वाला नितान्त !
सभ पाप मुक्त ओहिकाल भेल,
उपजल मनमे अति शुचि विचार।
नतमस्तक कएलहुँ नमस्कार।
देखल हम जहिआ हरिद्वार !
देखल हम जहिआ हरिद्वार !!

२

ओ परमरम्य मञ्जुल प्रभात !
पर्व्वत - प्रदेश - वन - कुसुम - कुञ्ज,
सुरभित पवित्र मृदु मन्द वात,
गङ्गांचल - चञ्चल- ऊर्म्मि – स्निग्ध,
शीतल करइछ सभ जनक गात ।
अति शुभ्र उच्च गिरि-शिखिरासन पर
बैसि परम आनन्द मग्न,
स्वर्णिम परिधान पहिरि प्राची—
नव-जात तरणि सुत अङ्कलग्न
देखथि गौरवयुत; मातृ-हृदय
होएत किऐक नहि साभिमान,
अछि जकर प्रदीप्त तनए करइछ
संतत जग - जीवन ज्योतिदान !
अतिशीघ्र ध्यान आकर्षित हो'
सुनि आरतीक घंटा निनाद
मन नाचए लए मंगल प्रसाद !
मन नाचए लए मंगल प्रसाद !!

वसन्त

भेल फागुन अन्त, देखु, वसन्त आएल ।
यामिनिक अन्तिम प्रहर प्राचीक भाल विराज
शुक्र ज्योतिष्मान, कोकिल करए पंचम गान
मुकुलित आम्र-शाखा बैसि ।
पवन पंकज अरु रसालक मंजरीक सुगन्ध
लए वहए अति मन्द, भन भन भमए भमरा मत्त ।
प्रकृति शोभा – नवल किसलय, हरित पत्र विचित्र,
रक्त किंशुक, श्वेत जूही, अमलतास सुपीत
करए मन मोहित, करए आकृष्ट सभहिक चित्त ।
किन्तु, प्रकृतिक ई मनोहर सौम्य प्रातःकाल
छनहि बदलए—
जखन-रवि कर-निकर वह्नि समान
तप्त करइछ भूमि, अरु उद्दण्ड पश्चिम वायु
वहए दिन भरि भए सहायक अग्नि देवक, खिन्न
कृषक देखए गृह अपन भस्मावशेष समस्त
अन्न संचित क्षार परिणत, वायुवेगंक संग

शून्य गगन विलीन,
अरु निज अल्प वयसक पुत्र
मातृ-क्रोड़-स्थित बुभुक्षाकुलित तरु तल सुप्त।
कूप सभ जलहीन, वापी शुष्क, तटिनी बीच
तप्त सिकता राशि, अरु तृण-रहित क्षेत्र विशाल,
कमला नदी तट ठाढ़ अछि आमक भयद कङ्काल।
ई वसन्तक शुभ समय ?
मानव जगत कोन भाँति
कए सकत उपभोग
अतिशय दग्ध हियसँ राति
नील नभ तारक खचित, अति शान्त प्रकृतिक रूप ?
की पिपासित क्षुधित बालक भए सकत संतुष्ट
शुभ्र-नभ-गंगाक करुणा दृष्टसँ ? अति क्षुब्ध
व्यथित युवकक हृदय विच होएत मृदल झंकार
पिकक कलरव सुनि समीपहि ? की पपीहा बोल
युवति-मन अस्थिर करत अभिसार हतु ? निचिन्त
सुति सकत की वृद्ध नीरव शीत रजनिक अङ्क ?

जय भारत

आइ ई शुभ विजय दिन,
तारीख पन्द्रह, शुक्र,
आओर एहि देशक नवल इतिहासमे विख्यात मास अगस्त,
भए रहल अछि दृढ़ ब्रिटिश-साम्राज्य गौरव अस्त।
छलहुँ हम सभ ग्रस्त,
आओर जे किछु देश छथि परतन्त्र,
रटि रहल स्वाधीनता केर मंत्र,
सभक मनमे भरल छन्हि उल्लास,
आब हुनका होइत छन्हि विश्वास—
छथि देखैत भविष्यकेँ ओ पूर्ण आशा दृष्टि,
भए रहल अछि आइ अभिनव सृष्टि।

दासता केर पापसँ रंजित विकृत इतिहास-गत ओ पत्र—
उनटि रहलैं' आछ, एखन प्रारम्भ
भए रहल अछि मुक्ति-नव-अध्याय,
आइ होइछ मुक्त चालिस कोटि जन-समुदाय।
आइ अछि स्वाधीन।
आह ! ओ परतन्त्रता !

दू शताब्दी पूर्व तोहर कठिन चाङुरमे फँसल ई देश,
ई हमर प्रिय देश भारतवर्ष,
छल जगत-विख्यात, की ऐश्वर्य्य, की उत्कर्ष !
किन्तु जहिआसँ कसल जंजीर,
क्रमहिँ पतनोन्मुख भेलहु हम—
कला कौशल वृत्ति ओ व्यापार
नष्ट बौद्धिक, सांस्कृतिक आधार;
विविध नैतिक, राजनीतिक ह्रास,
प्रकृति-धारा रुद्ध, मृत उच्छ्वास।
अन्त तक बस बचल अति कृश गात्र
अस्थि पजर मात्र।

किन्तु एहू कलेवरमे अमर छल ओ अंश
आत्म - जागृति, पूर्वजक स्मृति
दैत छल बल, प्रेरणा सभ भाँति
सुप्त अवयवमे सतत छल चेतना-कण
ज्वलित — जीवित क्रान्ति,
शृङ्खलाकेँ तोड़ि फेकवा लेʼ सदैव अशान्ति।
छलहुँ झकझोरैत एकरा शिथिल होइत गेल ई दुर्बन्ध,

सहल हम कत क्रूर अत्याचार,
पाशविक अरु नीचतम व्यवहार,
बाल, अबला, वृद्ध—युवा सभहिक कहब की ?
सड़ल कारागारमे—बलिदान शत शत प्राण
बढ़एबा लेʼ भू-जननि-अभिमान,
विश्व-भूषण अनेको वर रत्न
यत्नसँ पोषित, सुरक्षित, कएल हम उत्सर्ग—
देशकेँ स्वाधीन करबे टा हमर छल सर्ग।
अहिंसा अरु शान्ति-पथ पर
विना कोनो तोप वा तरुआरि अथवा यंत्र
आत्म-बल अरु एकताक सुमंत्र
लए बढ़ल चललहुँ, अनेक प्रहार
शत्रु करइत छल, सहिअ हम, झुकाओल नहि माथ,
आओर अपने नहि उठाओल हाथ;
शत्रुओस छल न हमरा द्वेष,
ई अहिंसा-युद्ध—गान्धीजीक नव संदेश।
एहि अमोघ प्रयासँ अति प्रबल अरि पर जीत
भेल अछि हमरा, बनाओल शत्रुकेँ हम मीत !

विकल युगमे - जखन सभ थल भए रहल संघर्ष,
नित्य प्रति विध्वंसकारी अस्त्र
मानवक चिर सभ्यताकेँ कए रहल अछि ध्वस्त,
शान्तिमय शुभ हमर ई आदर्श—
देखाओल अछि मार्ग जगकेँ वृद्ध भारतवर्ष।

आइ विजयक दिन हमर अछि ध्यान
कए रहल आकृष्ट उन्नत राष्ट केर सम्मान
तिरंगा सुन्दर पताका—त्याग, शुचि, कृषि कर्म्म
शुद्ध गैरिक, श्वेत, अरु हरिताभ करइछ द्‌योत,
नील रंजित चक्र शोभित मध्य शुभ परिवेश,
धर्म्म-पथपर कर्म्म-रत रहबाक दैछ निदेश।

उत्सवक एहि शुभ समयमे
प्रार्थना हम करिअ हे भगवान !
देश-गौरव बढ़ए सभदिन,
आओर गुंजित हो सतत
नीलाभ नभमे शान्ति वन्देमातरम् केर गान !!

शारदा विजय

"जयति 'शंकर' प्रवज्याचार्य्य !"—
व्यथित मन सुनल मैथिल-आर्य्य।
सुनल सभ लोक, सभ विद्वान
देश देशक, समागत अरु पाबि कए सम्मान
छला' श्रेणी-बद्ध बैसल, सुनल ऋषि मुनि धीर,
सुनल मैथिल वृन्द बालक युवक वृद्ध अधीर,
मन्द अरु गम्भीर ई जयकार,
सभा निर्णायक पद-स्थित शारदाक विचार।

दीर्घ सोल्ह दिवस धरि शास्त्रार्थ—
श्रुति, स्मृति, वेदान्त, दर्शन सकल अर्थ पदार्थ,
विविध तर्क वितर्क, दुइ पण्डित प्रकाण्डक युद्ध,

उभय पक्ष समान, विजयी शुद्ध अरु सम्बुद्ध,
शास्त्र-चय तूणीरसँ लए वचन-शर अविराम
बुद्धि-चाप चढ़ाए छोड़थि, विजय हित मन-काम।
एक संन्यासी युवक शंकर छला' विख्यात,
अपर मैथिल-मौलि मंडन मिश्र यश-अवदात।

भेल निर्णय, भेल जयजय-कार,
तुमुल करतल-ध्वनि प्रकम्पित भेल नभ शतवार ।
विजय-गर्व्वोन्नत सकल दक्षिणक पंडित-वृन्द
कएल सम्भाषण परस्पर मन्द, जनु मकरन्द पीबि मिलिन्द ।
अन्य प्रान्तक पंडितहु विच छल बहुत संतोष,
सर्व्वदा मैथिल-पराजित, हुनक मनमे क्षुद्र, ईर्ष्या-दोष,
छल सतत, ओ आइ भए गेल शान्त,
आइ हुनकर दग्ध हिय अछि तृप्त शान्त नितान्त ।
अरु प्रथम निज मानहानिक दृश्य, ई परिताप,
सकल मैथिल, विज्ञ, पुर नर नारि ई संताप
सहथि नत-शिर, मौन बैसल, क्षुब्ध संज्ञा-हीन
प्रबल वात्याहृत समुन्नत विटप जनु श्रीहीन ।

सूनि निज जयकार,
दीप्त तेज पुंज शंकर स्मित-वदन शंकर यथा साकार !
स्थिर छला' बैसल, न किछु उद्वेग नहि उल्लास,
शान्त सुन्दर मूर्त्तिमे आनन्दमय आभास ।

आओर सम्मुख हुनक छल नत नम्र-मस्तक आज
महा-महिमा-मण्डिता मिथिलाक गौरव, लाज,
पण्डितक शिर-मौलि मण्डन मिश्र,

वेद-विद्या-निपुण वाचस्पति सदृश,
काव्य-कविता-कौमुदी निशि-पति सदृश,
तर्क-दर्शन-गहन-पञ्चानन छलाह अजस्र,
दिग्विदेशक छलन्हि दिग्गज विवुध शिष्य सहस्र,
शिष्य, उपशिष्यो जनिक विद्वत्प्रवर दुर्धर्ष !
शारिका शुक श्रुति स्मृतिक चर्च्चा करए उत्कर्ष !!
सएह मंडन मिश्र,
विमल-यश-ज्योत्सना पराजित आज भेल तमिस्र ।
मंत्रबलसँ शान्त, अवनत-फणि, भुजंग समान,
अलौकिक विद्युत्--छटा सम शक्तिसँ हृत-ज्ञान,
महाभारत मध्य शत-शर-विद्ध भीष्म प्रवीर
सन छला' ई वृद्ध गुरु, उद्विग्न चित्त अधीर ।

तुमुल जय जयकार,
हिनक प्रतिपक्षीक जय जयकार !
दीर्घ जीवनमे प्रथम ई कुलिस कर्क्कश ध्वनि केरैछ प्रहार ।
स्तिमित लोचन, किन्तु ओ जयनाद,
शून्य नभमे कुण्डलायित धूम्र-अक्षर बनि अनैछ विषाद,
ग्लानि बनि साकार करइछ अट्टहास प्रमाद !
अन्तरात्मा व्यथित कहइछ — मैथिलक जयमाल

आइ भए गेल म्लान, उन्नत वैजयन्ती लाल,
आइ अछि अवनत, विजय यश-गान
मन्द, नीरव, मैथिलक जे आत्मगौरव, मान
प्रतिष्ठा छल — भेल सभटा ध्वस्त,
हमर, मिथिला, मैथिलिक की भाग्य भास्कर अस्त !
आओर अधिनायक एकर हम,—पराजित, धिक्कार !
छिः हमर जीवन, हमर पाण्डित्यकें धिक्कार !
अल्प बयसक युवकसँ ई हारि,
की कहत मिथिलाक पुर नर नारि ?
की कहत भावी हमर सन्तान ?
जन्मभूमिक दिव्य उन्नत भाल पर देखत कलंकक दान !
आइ संन्यासी बनब हम भारतीक समक्ष !
छथि जखन निर्णायिका ओ मौन भए निष्पक्ष ।
हुनक शुभ आशा लता पर ई तुषारापात,
भेल छल की एहन कहिओ मानसिक आघात ।
छलन्हि स्वप्नहुमे न आशंका जकर से स्पष्ट
देखि कत सन्तप्त हिअसँ सहथि मार्म्मिक कष्ट !
आओर हम कारण एकर, धिक्कार,
आइ प्रतिपक्षीक जय जयकार—

सुनि रहल छी, हम एतए हत-बुद्धि ।
........युवक संन्यासीक अछि कत ज्ञान,
की प्रतिभा, अलौकिक सिद्धि !
सिद्धि ? सिद्धि निश्चय,........
की स्वयं शंकर लेलन्हि अवतार ?
आन के एहि भूमि पर अछि, जकर गूढ़ विचार
करत हमरा मौन,—
करत मंडन मिश्र कें शास्त्रार्थमे जे मौन ?
....ब्रह्मचारी रूपमे अछि महा दैवी शक्ति—
होइछ किछु किछु भक्ति........ ।
देखि एहि विधि मौन मंडन मिश्रकें बहु काल,
वृद्ध मुनि जैमिनि, सुशोभित शुभ्र-श्मश्रुक जाल
ऊठि कहलन्हि—
आर्य्य मंडन मिश्र ! छी अहँ धन्य,
वेद, विद्या ज्ञानमे अछि भूमि पर के अन्य
जे करत शास्त्रार्थ हिनकर संग,
ईश्वरक अवतार पुरुषक संग,
थिकथि ई जे कपिल भए सांख्यक कएल निर्म्माण,

देल दत्तात्रेय-रूपेँ योग-दर्शन-ज्ञान,
आओर वेदव्यास द्वापरमे रचल वेदान्त,
सएह सम्प्रति देखि आर्य्यावर्त्तकेँ आक्रान्त--
विविध नास्तिक धर्म्मसँ, अछि लेल पुनि अवतार,
मनुज नहि ई थिकथि परमेश्वर स्वयं साकार।
धन्य अहँ केर भाग्य, विद्या बुद्धि ज्ञान विवेक,
दीर्घ सोलह दिवस धरि शास्त्रार्थ केर ई लेख,
रहत चिर इतिहासमे आचार्य्य,
उठु, हिनक शिष्यत्व वा सहकारिता कर्त्तव्य थिक ....
हे आर्य्य !

शुद्ध आस्तिक सनातन धर्म्मक सुरक्षण हेतु
होउ तत्पर देशमे फहराउ, उज्ज्वरकेतु !"
मुनिवरक उपदेश सुनि, गत-मोह संयत-चित्त,
नम्र मंडन मिश्र, विद्या-वित्त,
प्रति-श्रुत शिष्यत्व अरु संन्यास, गहणक हेतु
चलल मैथिलकेतु।
किन्तु आसन छोड़ि रोकल, तड़ित-नारी-मूर्त्ति
शारदा सम 'शारदा'--छल जनिक उज्ज्वल कीर्त्ति,
रूप, विद्या, विनय अरु व्यवहारमे नहि आन
छल जगतमे पाओल जे सम्मान

अलौकिक शास्त्रार्थ निर्णयिकक उत्तम स्थान !
आओर सम्पादन कएल निष्पक्ष,
देल शंकरकेँ विजय वर माल्य, मंडन मिश्र केर समक्ष !
सहल मार्म्मिक व्यथा, अन्तर्वेदना अरु ग्लानि,
अपन स्वामिक पराजय,
निजकुलक अरु मिथिलाक कत बड़ हानि;
रोकि सभ उद्वेग, बैसलि मौन, धए हिय धीर,
बाड़वानल ग्रीष्म अन्तः स्रोतयुत जलनिधि यथा गम्भीर।

कहल--"मुनिवर, उपस्थित विद्वान !
हमर समुचित कथन पर दिअ ध्यान,--
विजय पाओल जगद्गुरु आचार्य्य,....
किन्तु ई आंशिक विजय; मम आर्य्य
गृही, हुनकर शक्ति हम अर्द्धाङ्गिनी, मध्यस्थ
छलहुँ एहि शास्त्रार्थ बिच, शंकर स्वयं सन्यस्त,
ब्रह्मचारी पूर्ण छथि। ओ करथु पुनि शास्त्रार्थ
एतए, हमरा संग, अरु यदि विजय होइन्हि यथार्थ,
तखन विजयी, अन्यथा ई पराजय स्वीकार
करब नहि एहि रूप, नहि मम आर्य्य-देव उदार,
कए सकैं छथि ग्रहण ई संन्यास वा शिष्यत्व

शंकरक एहि विजयमे नहि रहत किछुओ तत्व !"

सूनि ई दृढ़ मधुर ध्वनि गम्भीर,
दिव्यवाणी सम, प्रभावित अचल पलकहिँ थीर,
देखतहिँ रहलाह सभ किछु काल,
विजय पक्षी दक्षिणक विद्वान भेल बेहाल।
अन्य पंडित-वृन्द वैसल शान्त,
उचित अनुचित ज्ञान-शून्य नितान्त।
भेल मैथिल वृन्द उत्सुक-चित्त, अरु सोल्लास
जनु तिमिर घन गहन वन बिच पावि पूर्ण प्रकाश;
मनहिमन सभ अपन देवी देवता गोहराए
शक्तिरूपा 'शारदा' पर आश दृष्टि लगाए।
महा विदुषी मैथिली-महिलागणक जयकार
शारदा पक्षक समर्थन कएल तीव्र प्रकार !

दुःख पुनि आनन्दसँ विह्वल परम श्रीमान
आर्य्य मडन मनहिमन श्रद्धासहित सम्मान,
कएल निज प्राणप्रिया अर्द्धाङ्गिनीक विशेष,
अलौकिक-प्रतिभा समुद्भासित वदन अनिमेष
देखि रहला' मौन।
विजयी शंकरक स्थिर बुद्धि,

भेल किछु विचलित; हुनक विज्ञान, विद्या, सिद्धि,
आइ देखल प्रथम नारी मूर्त्ति
शारदा वा भारती प्रतिमूर्त्ति !
किन्तु किंचित विजय-मद, पुरुषत्व-भावावेश,
धीर मृदु शंकर कहल—"हे देवि ! किछु अवशेष
रहल नहि निर्णय करक; यद्यपि एहन शास्त्रार्थ
अरु अहँक प्रतिभा, विशद वैदुष्य, ज्ञान यथार्थ
प्रथम हम देखल एतए सानन्द,
रहत चिर मम स्मृति-पटल पर शुभ्र ज्योति अमन्द।
किन्तु भारति, देवि ! पुनि किअ व्यर्थ वाद-विवाद,
व्यर्थ पुनि शास्त्रार्थ केर प्रमाद,
व्यर्थ पुनि किछु दिवस होएत नष्ट—
की प्रयोजन—जखन निर्णय ज्ञात अछि सुस्पष्ट ?
आओर—पुनि शास्त्रार्थ महिला संग—
होइछ अति संकोच, मम पुरुषत्व, ब्रह्मज्ञानपर ई व्यंग
व्यर्थ जनु करु देवि, करु सुविचार,
चलबु हमरा संग पंडित प्रवर मिश्र उदार।"

देल उत्तर शारदा—"शंकर, परम धीमान !
उचित नहि अछि अहँक ई अभिमान—

अपन निश्चित विजय, अरु पुरुषत्व, निज विज्ञान
मोह-वश अहँ कएल नारी नारी केर अपमान, ।
इष्ट वीणापाणि शक्तिक रूप,
ब्रह्म-वादिनि भेलि छथि गार्गी, हुनक अनुरूप
अनेको विदुषी एतए जे वेद-ज्ञान-प्रकाश,
देल जगकेँ, जनिक उज्ज्वल कीर्त्तिसँ इतिहास
रहत चिर भासित; हुनक महिलागणक अपमान,
ब्रह्म-ज्ञानी पुरुष राखथि हेय दृष्टिक ध्यान !
उचित नहि ई अहँक सन आचार्य,
भाव-वश नहि उचित त्यागन कार्य ।''

उचित बूझल लोक सभ, अरु कएल शिर संकेत,
महा मुनि जैमिनि, विहुँसि शुभ शाधुवाद समेत ।
चलल पुनि शास्त्रार्थ प्रातः काल,
स्निग्ध रवि अरुणाभ रश्मिक जाल
कएल उद्भासित वृहत् मंडप, जतए बुध वृन्द,
शास्त्र-मधुरस पीबि झूमथि मन्द,
मधुर दक्षिण गन्धवह-दोलित यथा अरविन्द ।
आओर दिन प्रतिदिन क्रमहि बीतल समुत्सुक काल,
शारदा शंकर स्वयं साकार

मथथि जनु श्रुति स्मृति पुराणक ग्रन्थ,
हो न किछु निर्णय, विवादक अन्त ।
तखन विदुषी चतुर पूछल प्रश्न—
काम-शास्त्रक गूढ़ विषयक प्रश्न; – चिन्तामग्न
भेल 'शंकर' मौन, अतिशय व्यस्त
शैशवहिसँ ब्रह्मचारी, मुक्त ई संन्यस्त,
पढ़ल श्रुति स्मृति, योग दर्शन सकल शास्त्र पुराण;
कएल तप, अरु पाओल कत अनुभूति, ब्रह्म-ज्ञान—
किन्तु रहला' सतत विश्वक सृजन-ज्ञान अबोध,
आइ नारी लेल निज मायाक बल प्रतिशोध ।
जगत वासीकेँ गृहस्थाश्रमक ज्ञान नितान्त
होइछ आवश्यक, तखन अद्वैत केर सिद्धान्त
सृष्टिचालनमे करत व्याघात—ई भेल सिद्ध ?
ग्लानि अरु परिताप कंटक-विद्ध
रुद्ध-स्वर शंकर कहल,—''हम पराजित छी आज;
धन्य अहँ केर बुद्धि, विद्या-चातुरी, अरु व्याज
कएल हमरा मूक; प्रश्नक उचित उत्तर जन्य
एक वर्षक समय-भिक्षा-दान चाहिअ, अन्य
रूप धरि ई काम-विषयक ज्ञान

सीखि आएब, देब उत्तर यथा विधि सज्ञान।"
विहुँसि कहलन्हि शारदा,—"आचार्य्य,
एक प्रश्नक हेतु दोसर जन्म ग्रहणक कार्य्य !
की प्रतिज्ञा छल एतए हे आर्य्य ?
पराजित भए जाथि विजयिक शिष्य—
केहन होएत दृश्य
यदि अहँ आज,
छोड़ि निज संन्यास व्रत मिलि जाइ वर्ण समाज ?

किन्तु से मम इष्ट नहि, अहँ वत्सरक उपरान्त,
सृष्टि गति विधि अविद्या-संक्रान्त
पूर्ण ज्ञानी बनि एतए पुनि आउ,
आर्य्य मिश्रक संग धर्मक पताका फहराउ।"

मुदित शंकर, स्मित-वदन स्वीकार
कएल; जय जय धन्य मिथिला, मैथिलीक विचार।
मुक्त स्वरसँ सबहिँ गाओल शारदा-जयकार॥

मानभूमि

हे मानभूमि !
ई मानभूमि ?
की मान एतए, की ज्ञान एतए, की शान एतए ?
अछि शुष्क रुक्ष पथराह भूमिमे
केवल कोइला खान एतए !
अछि कारी कारी अर्द्ध-नग्न,
अछि अन्ध-गर्त्तमे कार्य्य लग्न,
मानव शोषण अभिशाप मग्न—
शत शत बनिहारक प्राण एतए॥
ई शत सहस्र बनिहार एतए।
एक छोट कोठरी जकर भवन,
नहि ज्योति न वायुक जतए गमन,
संकोच लाज तजि दश दश जन,
बितबैछ राति दिन जन्म-मरण,
कलुषित चरित्र, कलुषित जीवन,
कलुषित एहि कारी भूमिभागपर
मनुज कीट साकार एतए !!

ई मनुज कीट साकार एतए !
पाथर कोइलापर जन्म लैछ,
नहि शुद्ध वायु, जल, दूध, अन्न—
तन-पोषक सामग्री पबैछ,
माइक सिनेह बापक दुलारसँ वंचित शिशु कहुना बढ़ैछ ।
एकरा नहि विद्या, बुद्धि, ज्ञान,
कारी अक्षर कोइला समान,
बारहम वर्षसँ लए गैंता, पथिआ माथा धए चलए खान ।
भू-गर्भ-गर्त्त अति अंधकार,
अवरुद्ध ऊष्म अरु विषम वायु,
घामार्त्त देह भए निर्विकार,
दुइ तीनि पहर धरि अथक परिश्रम कएनिहार ई थिक गड़ार !
ऊपर अवितहि ताड़ी, गाँजा, मदिरा चढ़ाए भए दुर्निवार,
घरपर अपनहिमे गारि मारि गंजनसँ बितवए शेष काल-
एहि भाँति जन्म अरु मरण जकर,
जीवनमे नहि सुख शान्ति जकर,
सुख भोग विलासी पूँजीपति बिच
मलिन एकर संसार एतए !!

अछि व्यवसायी धनवान एतए—

अछि शत शत लक्षाधिप महान,
लखि जकर बगए नहि देब ध्यान,
नहि विद्या, नहि आत्माभिमान,
छै' किन्तु बैङ्कमे लक्ष लक्ष,
लक्ष्मी सेवामे पूर्ण दक्ष,
अनकर श्रमसँ पोषित तुन्दिल,
शत शत मानव पाषाण एतए ।।
अछि हृदय-हीन धनवान एतए !
अपनाले' रम्य विशाल सदन,
जल झरना, बिजुली-ज्योति, वायु,
सम शीत ताप, सभ सुख साधन,
भोजन रुचिकर, फल फूल मधुर,
पुनि विविध प्रकारक मत्स्य मांस,
चटनी अँचार, पापड़ कुड़कुड़,
शीतल सुवास युत जल,
अङ्गूरक अरुणिम मदिरा पेय प्रचुर,
चलइछ प्रति संध्या भोज—
पुष्ट होइछ कते' कौआ-कूकुर;
चलबाले नव मोटर सुन्दर,

संगीत रूप लोलुप प्रतिदिन चलचित्र नाच वा नाटक घर,
अथवा क्लबमे जूआ अरु तासक वशीभूत रहि पहर पहर,
कए नष्ट समय, कए नष्ट देह,
सद्बुद्धि आओर कोमल विचार,
कृश मलिन बुभुक्षित नग्न बेचारा बनिहारक श्रम रक्त-धार-
सँ सींचि विलासक मधु उपवन,
राक्षसी - वृत्ति - सुखमय जीवन,
बितबए एहि यंत्र-युगक चालक
पाबए सभसँ सम्मान एतए।
हे मानभूमि,
कत कोटिवर्षसँ प्रकृति धरा बिच संघर्षणक प्रमाण भूमि !
ई विगत बाल्य-वसुधाक सघन हरियर अंचल,
शत विप्लव वन्यासँ प्लावित पंकिल दलदल
कए बेर धरातल बनल, रसातल उगल डुबल,
कत भीषण ज्वालामुखी विनिर्गत वह्नि विकल—
पघिलल भूगर्भ पदार्थ, अग्निमय धातु वहल,
ई महा वृद्ध—विन्ध्यक वयस्क, कत खनिज उपल
सङ देखल सृष्टिक चलित चक्र,
वनि नाश आओर निर्माण भूमि।

ई नाश आओर निर्माण भूमि ,
ई मानभूमि !

कत प्रकृतिक अत्याचार सहन कए पाओल खान,
त्यागी दधीचि, शिव, कर्ण सदृश-दानी महान-
ई दैछ स्वयं नरकान्धकार बिच रहि, जगतीकेँ ज्योति-दान,
आधुनिक यन्त्र युगमे स्वतन्त्र भारतवर्षक ई प्राण भूमि ।

की त्याग तपस्या विफल होएत ?
की पशु मानव सभ सफल होएत ?
नहि,—नवयुगमे शुभ परिवर्त्तन,
नव जागृति अरु उन्नयन सङ्ग
ई बनत सभक उत्थान भूमि—
ई मानभूमि ॥

'कातिक धवल तिथि त्रियोदशि......'

कातिक धवल तिथि त्रयोदशि विद्यापतिक अवसान,
ई थिक पुण्य पर्व महान,
ई थिक पुण्य पर्व्व महान।
जग-जननि-जानकि-जन्मभूमिक मैथिलिक उद्यान,
कवि कोकिल कल काकली कूजित सरस मृदु गान,
कीर्त्तिक लता वृत्त वितान....ई थिक पुण्य पर्व महान।
लक्ष्मीश 'शिव' मिथिलेश जनिकर मित्र अनुकरणीय,
फहरा रहल छल शुभ्र कीर्त्तिक पताका कमनीय
ई मिथिलावनी रमणीय....ईमिथिलावनी रमणीय।
शृंगार रससँ सिक्त प्रेमक बीज वपनक गीत
रचल राधाकृष्ण पद रत मधुर पद्य पुनीत,
गाओल भक्तिमय संगीत....गाओल भक्तिमय संगीत।
उगना जनिक बनि कएल सेवा-वृत्ति शिव स्वीकार,
जनिक इच्छासँ बहल सुरसरिक नूतन धार,
भक्तिक ई परम उद्गार....भक्तिक ई परम उद्गार।
आइ हुनकर चरण कमलक चिह्नकेँ धए ध्यान
मातृ-भाषा प्रति करिअ श्रद्धांजलिक शुभदान
ई थिक पुण्य पर्व महान....ई थिक पुण्य पर्व्व महान।

जरत्कारु उपाख्यान

जरत्कारु मुनि तपमे लीन,
सुभग सबल तनु कएलन्हि क्षीण।
बाल ब्रह्मचारी जप-लग्न,
वेदाध्ययन, ब्रह्ममे मग्न।
कएल पर्य्यटन भरि संसार
भेल न कहिओ काम विकार।
सोचथि व्यर्थ दार परिवार,
रहता' ओ आजन्म कुमार।
घूमथि पृथिवी पर निर्भीक
ऊर्द्ध्वरेत जनु अग्नि प्रतीक।
दिन भरि चलि संध्या जेहि ठाम
रहथि राति भरि जपि प्रभु नाम।
तीर्थ बर्थ घूमथि बहु देश
निराहार, सहइत कत क्लेश।
देखल एक दिन – गहिँड़ इनार
तहि बिच अछि एक कतरा झाड़ –
ओकरा धएने कए जन दीन

नीचा मुह लटकओने क्षीण ।
अरु कतरा झाड़क जड़ि तन्तु
कटइछ बिहरिक मूषिक जन्तु ।
कँपइत हुनका सभकें देखि
मुनिकें उपजल दया विशेषि ।
पूछल - 'अहाँ सभक ई हाल !
झाड़क टुटइत खसब पताल ।
हमरासँ यदि हो उपकार
जप तप धर्म्म देव स्वीकार ।'
बजला ओ सभ—"अहँ छी वृद्ध,
बाल - ब्रह्मचारी तप-सिद्ध ।
बुझि पड़इत अछि नहि उद्धार,
धर्म्म, तपस्या, ज्ञान विचार
अछि हमरहुँ; ई गति दयनीय
वंश - च्छेद - जनित स्मरणीय ।
ब्रह्म वाक्य जे -- बिनु सन्तान
गति नहि हो मनुजक मतिमान ।
नहि चिन्हि सकलहुँ अहँकें देव,
नहि किछु मनमे एकरा लेब ।
हम सभ यायावर ऋषिराज,

जप तप धर्म्म कएल बहु काज,
पाओल स्वर्ग, किन्तु ई हाल
बिनु संतान सूत्र; ई काल
मूषिक संतति - तन्तुक छेद
करइत अछि, होइछ अति खेद ।
एक मात्र जीवित संतान—
जरत्कारु ऋषि विज्ञ महान ।
ओ नहि ग्रहण करै छथि दार
नहि बढ़बथि निज कुल परिवार !
हुनकर मृत्युक बाद तरन्त
हम सभ नरकक गर्त्त अनन्त ।
यदि हुनका कहिअन्हि अहँ जाए
मानब बड़ उपकार सहाय ।"

शोकित, खेदित, सुनि ई बात,
कहलन्हि—"क्षमा करिअ हे तात !
हमही थिकहुँ अहँक सन्तान
जरत्कारु, पापी अज्ञान ।
छल हमरा बड़ दम्भ यथार्थ—
ब्रह्मचर्य्य तप मात्र पदार्थ

जगमे विप्रक बूझल कर्म्म
नहि जानल ई धर्म्मक मर्म ।
क्षमा करिअ, हे पितर महान,
करब विआह, होएत सन्तान ।

किन्तु अपन नामक कन्यासँ करब विवाह,
अरु करबन्हि नहि हुनकर हम निर्वाह ।
भेटथि यदि भिक्षा-रूपेँ ओ अपनहिँ आबि
तखन करब स्वीकार, सुरुचि शुभ नारी पाबि ।"
लए पितरक आशीष चलल ऋषिराज
घूमल बहुतो ठाम विवाहक काज ।
किन्तु एहन बूढ़क सङ कन्या नहि केओ देल,
जरत्कारु खेदित अति चिन्तित भेल ।
तखन एक दिन — जंगलमे गम्भीर
स्वरसँ बजला', तीनि बेरि, मुनि धीर ।
"सुनु सभ लोक, चराचर दृश्य, अदृश्य,
पितर गणक अछि पुन्नरकान्ध भविष्य !
हुनकर उद्धारक कारण हम आज
भिक्षा चाहिअ द्वार, अपत्यक काज ।
हमरहि नामक कन्या-रत्न

केओ जन भिक्षा देथु सयत्न,
हुनक भरण-पोषण सभ भार
लेथु उठाए -- करथु सुविचार ।"

मुनिक वचन सुनि नागदूत सभ कहलन्हि जाए—
"नागराज, जल्दीसँ हुनका लिअ' मनाए ।
भङ्तराह सन बूझि पड़ैत छथि योगीराज,
किन्तु करब की, साधक अछि निज काज ।"

वासुकि अपन बहिनिकेँ कहल बुझाए,—
"अहँक कृपा बिनु अछि नहि आन उपाय ।
जनमि राजकुल, भोगल सभ ऐश्वर्य्य महान,
आइ अहाँकेँ दए रहलहुँ अछि भिक्षा-दान ।
मनमे नहि आनब अहँ एहि ले' रोष,
करब - अहँक सन्तानक सभ दिन पोष ।
कुल रक्षा-हित उचित करब सुख त्याग,
एहन तपस्वी पति पुनि, बुझु बड़ भाग ।"

चारु चीर हेमाभरण अति कमनीय कुमारि,
सोदर सङ अइलीह बन, जरत्कारु सुकमारि ।
वासुकि मुनिवरकेँ कहल—"अहँक वचन अनुसार
अनलहुँ अछि हम बहिनिकेँ, कृपया करु स्वीकार ।

चलु हमरा सङ विप्र-देव, अरु करिअ विवाह,
सुख पूर्वक अपने सभहिक होएत निर्वाह ।"
कहलन्हि ऋषिवर--"सुनु अहिराज ! हमर एक बात,
अप्रिय काज करथु नहि कहिओ ज्ञाताज्ञात ।
जहिए एहि बातक उल्लंघन होएत अनन्त,
त्यागि गृहस्थक जीवन हम चल जाएब तुरन्त ।"

नागराज सभ किछु कएलन्हि स्वीकार,
भेल मन्त्र-युत पाणि-ग्रह संस्कार ।
ऋषि मुनि सभ बरिआती दए आशीष,
लए विदाइ भेला' गृहस्थ बनला' योगीश ।
वासुकि भवन जाए ऋषि राज
लगला' करए अपन सभ काज—
एतहु सतत पूजा जपलीन
ईश्वर चिन्तन कार्य प्रवीण ।
पति आज्ञा पालन दिन राति
करथि प्रसन्न चित्त सभ भाँति ।
चेष्टा काक, चकित सारंग,
निद्रास्वानक, छाया संग
जरत्कारु पति-सेवा-कर्म्म

तत्पर रहथि स्वजीवन धर्म्म ।
एहि विधि बीतल वर्षक वर्ष,
ऋतुमति, स्नात, पाओल पति-स्पर्श ।
हर्ष चित शुभ गर्भाधान
भेल, कृपा कएलन्हि भगवान ।
शुक्ल शशिक सन नित वर्द्धिष्णु
वैश्वानर सन कान्ति भविष्णु,
मुनि-औरस धारण कए देवि
अति प्रमुदित मन पतिकें सेवि ।

कुसंयोग-वश दिवस एक मुनि खिन्न मोन एकान्त
पत्नी अंक निशंक सूति रहला' विभोर भए क्लान्त ।
किछु कालक उपरान्त अस्त-गिरि चढ़ल कमलिनी-कान्त
पति कर्म्म-च्युति भयसँ सुन्दरि चिन्तित भेलि नितान्त ।
निद्रा भंग करब अनुचित, पुनि अनुचित धर्म्मक त्याग,
हिन स्वभाव अछि ज्ञात, ज्ञात पुनि धर्म्मक प्रति अनुराग
जे होएत से सहब पराभव, शोचलि शंकित चित्त
कहल—"भानु अस्तमित, तपोनिधि उठु सन्ध्याक निमित्त !"
काँच निन्न टूटल घबड़ाएल क्रोधातुर मुनि भेला'

कहल—"किए तोड़ल मम निद्रा एहि रूपक अवहेला !
अहँक कोरमे पड़ल छलहुँ हम भार एतेटा भेलहुँ ?
उचिते सभ अपमान जखन नृप-घर-जमाए हम भेलहुँ !!
वेश, आइए चललहुँ हम छोड़ल अहँकेँ सुकुमारि,
रहु सुखसँ, हमहूँ पुनि वनक तपस्वी-ज्ञान-भिखारि।"
मुनिक कुलिश वचनक प्रहारसँ भग्न हृदय-दृग नोर,
डरसँ थर थर कँपइत भामिनि पति-मुख-चन्द्र-चकोर,
चरण गहल अरु कहल—"नाथ ! अपनेक धर्म्म रक्षार्थ
कएलहुँ ई अपराध, क्षमा करु, क्षमा विचारि यथार्थ।
पति-त्यक्ता जीवन वर-नारिक होइछ बड़का भार,
सहब कोना हे देव ! कोना काटब जीवन निस्सार ?"
भए प्रकृतिस्थ कहल ऋषि "सुभगे ! हमर अर्घ्य विनु अस्त,
होइतथि सूर्य्य ? असम्भव ! जानथि कर्म्मठ लोक समस्त।
अस्तु ! अहँक नहि दोष, किन्तु जे होएब'क छल से भेल,
थिक ई दैव विधान, जकर बश होइछ माया खेल।
एतए भोग-वश किछु आलस अबइत जाइत छल तनमे
दिवस काल निद्रा प्रगाढ़ ! अरु मन किछु आन व्यसनमे।

तपश्चर्य्यं नाशक ई सभ थिक, तँ जाएब हम वनमे—
प्रारब्धक अनुसार ईश इङ्गिति ई बूझब मनमे।
अद्यावधि मिथ्या भाषण हम कएल न हे वर नारि
गर्भ्भ-स्थित बालक होएता' दुहु कुल रक्षक सुकुमारि !"
ई कहि छोड़ि चलल ऋषिराज—
जरत्कारु मन चिन्ता लाज।
शोकातुर अति नृप-गृह जाए
कनइत सोदर कहल बुझाए।
सुनितहिँ वासुकि चिन्ता मग्न
कहल बहिनि--जे स्वयं विपन्न--
'की कएलहुँ ? बूझल छल बात
सर्प्प-यज्ञमे अहँसँ जात
पुत्र करत नागक कुलत्राण
ब्रह्म-वाक्य ई—वचन प्रमाण !
की भवितव्य न किछु हो ज्ञान,
रक्षा कोना होएत भगवान !
कहु किछु, उचित न पूछब अहँकेँ देवि !
पाओल फल किछु, एतबा दिन धरि पतिकेँ सेवि ?
हुनक स्वभाव, ज्ञान, सामर्थ्य

आनल अछि, हुनि पाछाँ व्यर्थ
दौड़व थिक,—खिसिआकए शाप
द्रए सकैत छथि,—नव सन्ताप।
कहु किछु अपन पतिक शुभ भाव
जहिसँ हृदयक हँटत दुराव।'

जरत्कारु संकुचित सज्ञान,
आश्वासन युत वचन प्रमाण
बजली' — 'गर्भवती छी भाइ,
अछि ई पुत्र--कहल पति आइ।
हुनक धर्म्म कर्म्मक सभ बात
ज्ञाते अछि अहुँकेँ हे तात।
कथमपि वचन न होएत असत्य
हमरा अछि विश्वास; अपत्य
हमर करत दुहु-कुल उद्धार
कहलन्हि अछि पतिदेव उदार।
हमरा छल जे भोगक भोग
कएल, करब पुनि एहिले सोग
अहाँ करिअ जुनि, उठु करु काज,
प्रभुक भरोस राखि, करु राज।'

वासुकि स्वस्थ चित्त, सस्नेह,
रखलन्हि हुनका अपनहि गेह।
साधन सुविधा सतत सयत्न,
जरत्कारु जठर-स्थित रत्न
बढ़ल शुदिक शशि-कला समान
जनमल तेजोमय भगवान।
'अस्ति'—मुनिक वचनक अनुसार
नाम पड़ल 'आस्तीक' कुमार।

उपनयनक वादहिं सुन्दर बटु ऋषिआश्रम चल गेला'
ब्रह्मचर्य्यं सत्य-व्रत विद्याध्ययन सुतत्पर भेला'।
भार्गव च्यवन महामुनिसँ पढ़ि शास्त्र-अङ्ग सभ वेद
स्नातक भए वासुकि गृह रहि ओ हरल-उरग-कुल खेद।

सौन्दर्य्य बोध

विशेष आमन्त्रण पर
गेल छलहुँ मित्रक घर।
नवनिर्मित सौध,
रम्य शाद्वल, वहु विधि प्रसून
प्राङ्गण बिच शोभित अछि....।
भव्य भवन — वाह्य अंग
ईषत् नभ नील रंग,
ओसारा केरि भित्ति सकल
शुभ्र हिम कान्ति धवल,
पाथा सभ मरकताभ
चिक्कन अति, अरुणाभ
परावर्त्तक स्फीत 'फर्श' मोजाइकक जाली युत
कारी किनारी देल, कनक पत्री रंगक जनु
नाइलोन केरि साड़ी हो।
वातायन, द्वार पर
चीनांशुक चम्पक द्युति
पारदर्शक आवरण···· ····
सभ किछु अति शुभ्र-शाभ्र,

सभ किछु आह्लादकर
सभ किछु नयनाभिराम····।
देखै छी;···· ····
मुख्य मुख्य स्थान पर
सात गोट गमलामे सात गोट उद्भिद--
उद्भिद वा जड़ पदार्थ !
विचित्र रूप — कंटकित,
कंटकित की ?····कण्टकमय !
सर्प्पाकृति, खूर्पाकृति
कीटाकृति, बेङाकृति
ठेङाकृति, आओर किछु
छोट छीन -- ढेङाकृति....
ई की वीभत्स-रूप !
बूझल नहि ? कैक्टस !
ई थीक आधुनिक
भद्र दृष्टि आकर्षक,
भवनक शोभा-वद्र्धक।
गुलाब वा वेली नहि,
जूही चमेली नहि,

बाहरसँ कंटकित, भीतर सुगंधित अति
केतकी वा केओला नहिं;
ई थीक कैक्टस—
पत्र वा पुष्प-हीन,
सुगन्ध दुर्गन्ध हीन,
अभिशप्त, दुखी दीन,
मरुस्थल निवासी सतत उपेक्षित विधातासँ
पओलक अछि आइ ई त्राता सभ्य जगमे।

मुग्ध हम भेल छलहुँ भवनक कला कौशलसँ,
क्षुब्ध कएलक अतीव नूतन सौन्दर्य बोध !!

प्रतीक

आधुनिक यंत्र-युगक हम छी प्रतीक, बन्धु !

दीर्घाकृति लम्बरूप,
नभचुम्बी उर्ध्वमुख,
संयंत्रक द्योतक हम,
तर्जनीक इङ्गिति सभ।

अभियन्तृ -- आकल्पित,
सुविवेचित, रूपाङ्कित,
उत्तम कलाकार अरु शिल्पीगणसँ निर्म्मित
महामान्य पूजित भए
विस्तृत आधार हमर—दृढ़ प्रस्तर-लौह-बद्ध;
ईट अरु बज्रलेप,
सिकताकण, उपल-चूर्ण,
जल-संग घूर्णित भए
मिश्रित भए सम्यक् भाव,
उत्तम उपकरण मात्र
रचलक अछि हमर गात्र।
यथासाध्य चिक्कन, सबल अरु आकर्षक

बनल अछि वाह्य अंग
अद्भुत किछु रूप रंग ।....

किन्तु मम अन्तरङ्ग
रिक्त अछि, तुच्छ अछि,
आर्द्र कण-सिक्त नहि, मार्दव-हीन,
स्नेह-रस-हीन अरु छुच्छ अछि ।
केवल-कलुष-पांशु युक्त
रुक्ष शुष्क दुर्गन्धित
दुस्सह उत्तप्त धूम
अहरह बहइत अछि
जरबैं अछि हमरा—
अन्तर्दाह भीषण अति !

शिशिर शीत, आतप ताप,
झंझा, आसारहुकें
सह्यकरी युग युग धरि
नितान्त आवरण-हीन
प्रलयंकर प्रभञ्जनमे
निश्चल समाधि-लीन ।
देखल की एहन रूप ?

सोचल की जीवन एहन ?
दावानल-अचानक हो, आओर समय-सीम ।
ज्वालामुख, बड़वानल — यदि कतहु,
विधि - विधान ।
किन्तु सभ्य शिक्षित विवेकी कत मानव मिलि
बुद्धि, विज्ञान, ज्ञान
विपुल धन, बल लगाए
कएलक हमर निर्म्माण !

सोचै छी,
हम की प्रतीक थिकहुँ
अथवा प्रक्षेप विकृत
आधुनिक सभ्यताक !
बाहरसँ चाकचिक्य
उन्नत शिर दम्भपूर्ण,
दूर दृष्टि आकर्षक,
किन्तु अति मलिन हृदय
अन्तस्तल दह दह जर
करुणा - रस - स्नेह हीन !

रिक्तः सर्व्वो भवति हि लघुः

'रिक्तः सर्व्वो भवति हि लघुः'
मेघक प्रति कहने छथि
कवि-कुल-गुरु कालि-दास ।
वेतहास जाइत छलहुँ मोटर पर,
दृष्टि उठल ऊपर
उत्तरार्द्ध शरद समय
अनुत्तप्त रवि - किरण
उद्भासित दिग दिगन्त
नभ अनन्त नीलाभ
शान्त रमणीय रूप ··· ।
कतहु कतहु उँच—
बहुत उँच दूर पर
तुच्छ किछु अभ्र-खंड
मन्द मन्द गतिसँ
जाइत अछि यत्र तत्र
जाइत भसिआइत अछि,
क्रमशः बिलाइत अछि
होइत अछि विलीन

कतहु दृष्टि पथ सीमा हीन
शून्य महा शून्य मे ···· !
ई थिक शरद मेघ !
निस्तेज, अन्तस्सार-हीन हल्लुक
अनावश्यक लोकक हेतु,
नितान्त अनाकर्षक ···· !
किन्तु, जखन ग्रीष्ममे
दीर्घ-दाध संतप्त
आकुल धरित्री अरु व्याकुल छल जीव जन्तु
भीषण अकाल-त्रस्त,
आर्त्त-करुण-प्रार्थित-स्वर—
सान्ध्य-क्षितिज कोर पर
प्रकटल घन खंड एक,
सभक दृष्टि आकृष्ट
भेल, आश संचार,
सृष्टि रक्षकक रूप देखल नव जलधर ।
वस्तुतः 'वीज' ओ केन्द्रक छल,
मेघक ओ क्षुद्र खंड

किंचित पीताभ प्रथम
क्रमशः पुनि धूमिल भए
बढ़ल गेल - पसरल गेल
व्याप्त भेल आकाश—
गाढ़ श्याम रंग दम ....
दामिनी दमकल छल,
घहर घन गरजल छल,
बरसल जल धराधर !
शान्त भेल आतप ताप,
पादप शाख मुकुलित,
रसमय कत फल रसाल,
प्रमुदित सभ जीव,
धरा अंकुरित रोमांचित ।

श्रावण घन बारिवाह
समीरण रथारूढ़
संचरल दिग दिगन्त—
दुर्गम गिरि श्रेणि,
सघन अरण्यानी, प्रान्तर सम,
मालव उपत्यका,

समस्त नभो मण्डलकें—
कएल निज पदाक्रान्त,
शान्त कएल ताप पाप
विद्युत करवाल अरु कठिन अशनि घातसँ,
जीवन-रस पूर कएल सरित सर वापी कूप

आषाढ़क प्रथम सान्ध्य-
क्षितिजिक स्तनयित्नु-बीज
ओएह सघन वारिवाह,
यौवन-रस-मत्त हस्त-नक्षत्रक झंझावात !

आइ ई शरद मेघ—
मात्र तुच्छ अभ्र-खंड
निश्शक्ति, निस्तेज,
मन्थरतम गतिसँ
जाइत भसिआइत अछि,
जाइत भसिआइत अछि,
देखै' अछि —स्वर्णिम शालि
शश्य भरल आँचर युत,
हरित वसन विविध सुमन भूषित वसुन्धरा—

आश उल्लास पूर्ण
जन-गण-मन पर्व्व लीन !

रिक्त-हस्त मेघ, लघु—
हल्लुक भए गेल अछि....
जाइत विलाइत अछि
होइत अछि विलीन....

किन्तु
जीवनक की गरिमा !
केहेन ई महिमा !!

लागल अछि कुहेस

लागल अछि कुहेस—
माघ मासक ई भीजल जाड़
हाड़ कपबैत अछि।
दीर्घ राति बीतल,
कतहु दूर कुजड़टोलीसँ
'कुकरू - कू'क आवाज
एक दू बेरि मात्र
पड़ल अछि कानमे।
देलक अछि अजान
बृद्ध एकाकी मौलवी
मश्जिदक गुम्बज चढ़ि—
पुनि गेल प्रायः सीरक तर।
....किन्तु हम सुनैत छी
लगक ओहि आङनसँ—
बूढ़ि बाबीक शीत-कम्पित-स्वर-मुखरित
विद्यापति, सूर, तुलसीक कत प्राती गीत....
बुझै' छी रात्रि अवसान--
दीर्घ रात्रि अवसान....।

खोलै, छी आँखि—
प्राची दिशामे प्रकाश नहि,
दमकैत चमकैत
ज्योतिष्मान शुक्र
ओ भुड़ुकवा कहाँ कतहुँ ?
आनो नक्षत्र नहि,
जन-जीवन-ज्योति
उषा-अरुणिमाक लेश नहि,
खगकुलक कलरव
वा कौओक कर्कश स्वर
सुनवामे नहि अवैछ—
लागल अछि कुहेस.... !

लागल अछि कुहेस.... !
धरा आकाश अस्पष्ट
सभ किछु अगोचर,
सभ जीव-जन्तु स्तब्ध-प्राय !
केवल किछु कालपर
केराक पातसँ
टप टप टप जल-बिन्दु

खसबाक क्षीण शब्द बुझबामे अबैछ,
जेना रजनि भरि प्रतीक्षामे
चिर जागरण क्लान्त
शान्त शयन कक्षमे
उपेक्षिता रमणीक करुण मौन अश्रु-पात हो !

लागल अछि कुहेस—
एखन प्रकाशक किछु लेश नहि,
आओर नहि अन्धकार।
अन्धकारक गौरव छैक;—
'कज्जलक पहाड़'सन
तरुणीक कुन्तल वा
घनश्याम अन्तस्तल, कलिन्द-तनया सदृश
श्रावण अमारात्रि सघन घन आच्छादित
निविड़तम अन्धकार
रखै' अछि महत्व,
अपन अस्तित्व बुझबै' अछि
दामिनिक दमक अरु गम्भीर गर्ज्जनसँ !

किन्तु ई कुहेस,

मात्र क्षुद्र जल वाष्प-कण
स्वयं निरशक्ति, गति-हीन, अरु निस्तेज,
पांशु वा कलुष-अणु-केन्द्रक-संलग्न
अछि लटकल, अधोमुख अभिशप्त त्रिशंकु जेकाँ—
रचलक अछि कुहर जाल,
माया आवरण सन
झपने अछि पृथ्वी केँ;
रुद्ध ई करैछ अरु प्रत्यावर्त्तित करैछ
बाह्यक प्रकाश पुञ्ज,
निकटस्थ वस्तुओ अबइछ नहि दृष्टि पथ,
स्वच्छो मुकुरकेँ करइछ ई मलिन,
अरु स्वरुपोकेँ हम देखि नहि सकैत छी।

प्रलयक पश्चात्—
अखिल अर्णव-जल-राशि-वाष्प
सिरजल की इएह रूप ?
सूर्य्य वा चन्द्रमा
अथवा नक्षत्र गण
ज्योतिष्कण कतहु नहि,
आ' ताही दिशि लक्ष्य कए कि

स्तुति वाक्य मुखरित भेल—
"तमसो मा ज्योतिर्गमय ...." !
आएल प्रकाश क्रमहि पृथिवीक ऊपर
अरु जीवन-जीव विकसित भेल।
मानव सुशिक्षित भेल—
शिष्ट समुन्नत ओ सभ्यता सम्पन्न भेल

एखुनको कुहेस ई
साधारण प्राकृतिक—भौतिक विपर्य्यय मात्र
किछुए सयमे ई क्रमशः अपसृत होएत,
देखब हम आलोक
होएत ऊर्जित शरीर।

किन्तु अति शंकित-चित,
मुद्रित नयनसँ हम
देखै छी—दम्भ कपट
दर्प्प अरु अहंकार,
(बैयक्तिक, दैशिक नहि—समस्त भूमण्डलक)
विज्ञानबुद्धि-जात
भयंकर कुहेस—
जे मानसिक-आकाश

मान्य आधार धरा
आवृत कएने बढ़ैछ,
गाढ़तर प्रगाढ़तम........
लागल अछि कुहेस !!

मनुज देखए नहि अपन रूप,
वाह्यक प्रकाश पुञ्ज,
अन्तरक ज्योतिष्कण
भासित नहि अग्रिम पथ—
लागल अछि कुहेस !!!

मेहक बड़द जेकाँ

सूर्य्य छथि ग्रहेश—
सौर-मंडलक ग्रह गण
आकर्षण-बद्ध
भिन्न कक्षामे घुमैत छथि,
पबै' छथि अजस्र ज्योति, ऊर्ज्जा अनन्त काल,
स्वयं ओ महान्, हुनक घूर्णिम गति स्थूल तम ।
हमहूँ गृहेश छी ।
परिवारक सम्बन्धसँ बान्हल
कत व्यक्ति
हमर सङ्ग-सङ घुमैत छथि,
पबै' छथि साहाय्यकिछु,
हमहूं घुमैत छी
मेहक बड़द जेकाँ,—
प्रौढ़, स्थूल-काय, आब असहाय बुझु ।
परिस्थितिक मेह
अरु संसारक झंझटसँ दाबल दुहू भाग,
नहु नहु घुमैत छी

सूर्य्य जोंक !
ओ छथि विराट्
हुनक मात्र किछु द्रव्य अंश
ऊर्ज्जामे परिणत भए
(ज्योति-गति-वर्गक अनुपातमे !)
अनन्त शक्ति संचित,
अरु वितरित हो चतुर्दिक्ष ।
अवस्था अनुसार हमर दैहिक द्रव्य ह्रास होइछ,
होइछ नहि शक्ति-प्राप्ति
सर्व्वत्र अपचय,
केवल मात्र अपचय;—
तथापि हम घुमैत छी
मेहक बड़द जेकाँ !

हत्या

उगिललक अछि आगि—अस्त्र !
टेलिस्कोपिक राइफलसँ
शान्ति सत्य-सेवी
सदुदार धर्म्म-सम्बल एक
श्याम महामानवक
कएलक अछि हत्या...!
कएलक अछि हत्या
केओ सभ्य-कुल सम्भूत
स्फीत परिधान,
अस्त्र शस्त्र शास्त्र-ज्ञाता श्वेत,
वर्ण अभिजात्य दम्भपूर्ण नर दानव !!

उगिललक अछि आगि
दुष्ट 'डेभिल', सर्प फूत्कार
कएलक अछि, अल्पबुद्धि
शत सहस्र मानवकेँ कएलक अछि विषाक्त
रक्त-तृष्णाकुल;
दह्यमान गृह, सौध

अट्टालिका लुंठित, बाल, वनिता, वृद्ध आहत,
व्यभिचार, बलात्कार कत राक्षसी अत्याचार,
युग युगसँ साधित जनु सभ्यताक सत्यानाश !
अट्टाहास करइछ ई 'डेभिल' 'शैतान' !
आइ ईश-पुत्र,
क्रुश-विद्ध ईशाक आत्मा
संकुचित, करुणासँ विगलित अति क्षुब्ध अछि ।
हुनक अपन रक्तसँ प्रक्षालित कलुष-मुक्त
जन-जाति केहन भेल ।
अभिशप्त मानव की
चिर मलिन-हृदय रहत,
पाप-पंक-क्लृप्त रहत,
शान्ति सुख-हीन रहत ?
लिङ्कन, गान्धी अरु केनेडी, मार्टिनक,
होइत रहत हत्या ?
होइत रहत रक्तपात,
होइत रहत उत्पात ?
प्रलयंकर युद्धक विभीषिका—
परमाणु-विस्फोट-उत्ताप-प्रबल ज्वाल
क्षार करत क्षमामयि धरित्रीक शान्त रूप !

चेत रे मानव !
श्वेत चर्म्मपर गर्व नहि,
शुद्ध कर हृदय मन निर्म्मल पवित्र कर ।
देख मार्टिन लूथर किंग—
निर्म्भीक शान्तिपथ लीन
केहन सूतल अछि,
शान्त भए पड़ल अछि ओ
श्यामल धरा कोरमे—
दू हजार वर्ष पूर्व—
पड़ल छल जेना ईश-दूत
देख—
श्रद्धावनत,
कत शत सहस्र
नत-मस्तक
श्वेत अश्वेत—
शान्ति-पाठ करइत अछि,
शोक सन्तप्त अति
लज्जित कलंकित अछि
एकमात्र दुर्बुद्धि-आततायिक कृतिसँ ।

देख हत्याराकेँ—
पाप-लिप्त मुहकेँ नुकओने पड़ाएल अछि,
सभ्यतासँ दूर कतहु प्रान्तर वा अरण्यमे— ।
कतए गेल— ? कहाँ गेल— ?
जाओ, ओ कतहु रहत—
अन्तस्तल-दग्ध रहत
खिन्न मन, चित्त अशान्त
जीवन भरि क्लान्त रहत,
मरणोपरि नरकाग्नि ज्वालामे तड़पत !
सचेत हो मानव ।
तोँ क्षुद्र शैतानक कनफुसकी मे पड़ नहि,
अपना के चीन्ह—
तोँ अमृतक संतान थिकेँ—
निष्कलुष शाश्वत आनन्द-रूप आत्मा तोँ,
अपनाकेँ देख, तोँ सभमे देख आत्माकेँ ।
त्याग-मय जीवन,
शुभ कर्म्म हेतु बलिदान—
अपन रक्तसँ जघन्य पाप पुञ्ज धोएलन्हि अछि,
ईशा, गान्धी, अरु मार्टिन लूथर किंग ।

देह-पात भेल किन्तु अमर हिनक वाणी अछि
शान्ति सन्देश दैत,
अमर हिनक आत्मा अछि
संतत सचेष्ट
जे पृथ्वी पर प्राणिमात्र
प्रेम-भाव भरल रहओ,
सभ केओ चिर सुखी रहओ ।
चल तोँ अनुरूप हुनक—
स्वप्न कर साकार !!

अभिनन्दन

शत सहस्र अभिनन्दन !
अद्भुत, अकल्पनीय, अविस्मरणीय घटना--
चन्द्रमाक तल पर भेल मानव शुभ पद अर्पण !
धन्य विज्ञान ज्ञान,
धन्य साधन महान,
स्वतन्त्र वातावरण
अनवरुद्ध मानव मन
चिन्तन मग्न कार्य्य लग्न
धन्य धन्य लक्ष-जन-निष्ठा-श्रम-तप-विधान ।
क्षुद्र नर तन परन्तु
साहस अपरिमेय,
अदम्य उत्साह
अरु मनोबल दुर्जेय;
महावीर, मृत्युंजय
धरणि पुत्र कॉलिन्स
आर्मस्ट्रॉङ्ग, ऑल्ड्रिन—
मानव समाजक आत्मशक्तिक परिचायक
शान्ति सन्देश वाहक

आइ चन्द्रमाक तल पर
राखल चरण आओर फहराओल विजय केतु
आगाँ ग्रह नक्षत्र-मंडल संचरण हेतु !!

गर्व्वोनत धरित्री आइ,
कोटि-कोटि जन गण मन
मंगल कामना करैत
दैछ शुभ अभिनन्दन
शत-सहस्र अभिनन्दन !!

आउ दुर्गे

आउ दुर्गे दुरित नाशिनि
सिंह-वाहिनि भगवती मा !
आउ दुर्गे दुरित नाशिनि ······· ।

शुभ्र विद्युत् कान्ति तनु,
शशि भाल, सुस्मित मुख, त्रिनेत्र,
त्रिशूल चक्र गदांकुशादिक
पाश कर, करवाल, चाप
प्रशस्त कत विधि अस्त्र सज्जित,
मत्त रण-चण्डी बनलि, रिपु--
शैन्य घालिनि, भगवती मा
आउ दुर्गे दुरित नाशिनि ···· ···· ।

सकल लोकातंक कारक,
मनुज-सुर-गण-शान्ति-हारक
विविध छल बल परम
गर्व्वोद्धत अजेय स्वरूप-धारक,
प्रबल महिषासुरक वक्षस्थल विदारिणि भगवती मा--
आउ दुर्गे दुरित नशिनि ···· ···· ।

धूम्रलोचन, चण्डमुण्ड,
प्रचंड सेनाधिप-त्रिदश-रिपु,
रक्तवीज विचित्र
मित्र समर्थ शुंभ निशुंभ
दैत्यक दर्प्प-नाशिनि,
अन्त-कारिणि, लोक-तारिणि, भगवती मा--
आउ दुर्गे दुरित नाशिनि ···· ।

वाम वीणा पाणि,
दक्षिण कमल धारिणि इन्दिरा,
अरु आखु-वाहन गजानन सह
षड़ानन, कत देव देवी-
योगिजन योगिनि सुसेवित,
विधि सुरेन्द्र उपेन्द्र वन्दित,
भक्तजन मानस विहारिणि,
मुक्ति दायिनि भगवती माँ ···· ···· ।

आउ दुर्गे दुरित नाशिनि,
सिंह वाहिनि भगवती माँ ···· ···· !!

अन्तरिक्ष—यात्री

उड़ि रहल छी व्योममे हम तीव्र वेगें–
प्रति मिनटमे
तीनि सएसँ अधिक मीलक गति हमर अछि;
मात्र नव्वे मिनटमे—
किछु दीर्घ वृत्ताकार पथ धए
करी पृथिविक प्रदक्षिण हम !

पुराणक अनुसार
गरुड़ अरु हनुमान,
जाम्बवान महान कें
छलन्हि क्षमता—
अनेको वेरि अवनिक प्रदक्षिण करवाक....
किन्तु ओ सभ मनुज नहि .... ।

हम सदेह मनुष्य छी;
दूर, पृथिवीसँ बहुत छी दूर....।
केहन सुन्दर, केहन ई अपरूप उदयक काल,
अरुण वर्ण-च्छटा रश्मिक जाल,
सूर्य, पूर्ण शशांक दुहु दिशि
मातृ-अंचल-लग्न जनु दुइ बाल !

नील सागर मेखला
अरु महा-सागर मध्य
फेन बुद्बुद रूप द्वीप समूह,
धवल ध्रुव दुहु,
शुभ्र सानु हिमाद्रि,
हरित घूसर अफ्रिका, आष्ट्रेलिया भूभाग
एतएसँ सभ किछु सोहाओन लाग !

एतएसँ हम, ग्राम, देश, प्रदेश
मात्रकें नहि बुझिअ निज :
हो भान
विविध वर्ण विचित्र शुभ्र परिधान
पहिरने सम्पूर्ण धरिणी देवि
थिकी' अपने जननि !
भेदक ज्ञान
अछि न, केओ किछु बुझि पड़ै' अछि आन—

एतए छी हम शून्य' नभमे
शत सहस्रो यंत्र-संयत कक्षमे
ई देह अछि भसिआइत—
धरा-गुरु-आकर्षणक नहि लेश,
भार हीन-शरीर वस्तु विशेष;

मन तथापि अनेक दिशि बउआइत—
मात्र यन्त्रक वलें ई स्थिति प्राप्त ।

एहन मानव छथि धरा पर—
मन अचंचल, बुद्धि स्थिर, चित शान्त,
साधना-संयत-मनोबल युक्त
मोह आकर्षण-परिधिसँ मुक्त,
निरासक्त, समस्त जग संसार
होइन्हि हुनकर अपन जन परिवार ।
किअएने ओहने बनी,
वैविध्यमे एकत्व
भाव राखी, छोड़िदी संकुचित क्षुद्र ममत्व ।

सभक यदि हो एहन व्यापक दृष्टि,
केहन पृथिवी परक होएत सृष्टि !!

'बाह रे संसार,
देखलें संसार' !

आगि लागल अछि
जरै' अछि ग्राम नगर प्रदेश,
जरए सोनाक बङ्ला देश ।
जरै' अछि सात—साढ़े सात कोटि
मनुष्य केरि ओ जन्म गत अधिकार
स्वतन्त्राक;
विनाश नर-संहार,
बन्दूक, तोप, मशीन गन केरि बात नहि,
आकाशसँ हो बमक वर्षा, अग्नि वर्षा,
होअए वज्र प्रहार,
क्रूर दमनक चक्र,—
बालक वक्ष पर हो कठिन बूट प्रहार,
वृद्ध सभकें 'बायनेट'क तीक्ष्ण धारें विद्ध कए
हो अट्टहास,
विलास —
शत-शत बालिकाकें बाप-माएक समक्ष

नग्न कए की घृणित अत्याचार—की व्यभिचार,
राक्षसी, पशु बलात्कारैं... मृत सहस्रो युवति शवसँ
भरल खाधि, इनार !
आओर ई सभ सभ्य जगमे —
एहि वीसम शताब्दी मे !
धन विभव अरु शक्तिसँ सम्पन्न
राष्ट्र सभहिक प्रेरणासँ,
पाबि सभ साहाय्य
ताल ठोकए, करए गर्ज्जन—करब अत्याचार,
ई हमर अधिकार,
की करत संसार.... ?
बाह रे संसार !
बाह रे संसार !!
एहन उत्पीड़न, एहन आतंक
लक्ष-लक्ष विपन्न नर नारी
अपन गृह छोड़ि,
क्षुधातुर, तन नग्न, लक्ष्य-विहीन
चलए घुरि देखए न निज गृह ग्राम,
चलए सीमा पार अछि एक देश—

जतए पाएब शरण, पाएब त्राण,
बँचत कहुना प्राण !
देश देशक लोक देखल स्तब्ध
ई व्यवहार,
अश्रुत पूर्व नृशंस अत्याचार;
छपल फोटो, रङल विश्वक अनेको अखबार,
देखि कए चल चित्रमे ई दृश्य
कारुणिक दृगसँ बहल जलधार,
पत्र लीखल, देल भाषण, पास भेल प्रस्ताव,
पठा' किछु किछु द्रव्य, औषधि,, देखाओल सद्भाव ....।
किन्तु नहि केओ देल किछु साहाय्य
वीर बङला मुक्ति वाहिनि युवक जन कैँ
जे वरण कए मृत्यु मुक्तिक हेतु
करै, छल संग्राम;
न केओ ओहि नष्ट-गृह, आवास, धर्म्म, समाज,
नष्ट-देहक लाज, नर - नारीक,
कोटि नर-नारीक आँखिक नोर
आबि कए पोछल;
न केओ दर्पान्ध

‘खान’ दानवकें दपेटल;
मात्र नारी एक
शान्ति, करूणा, वीरताक प्रतीक,
देल एक ललकार,
कएल गर्ज्जन, कएल ओ हुंकार,
‘बन्द कर ई क्रूर अत्याचार,
बन्द कर ई मनुजताक कलंक,
धर्म जातिक नाम पर तो बन्द कर ई घृणा-भाव-प्रसार
शान्त कर विस्फोट ज्वाला,
अन्यथा तों स्वयं होएबे नष्ट;
करत भारत धर्म्म - रक्षा
सहत अपने कष्ट;
करत शरणागतक सभ विधि त्राण,
मुक्त-वाहिनिकें करत साहाय्य अरु सम्मान !’
देल ई संदेश, कएल सचेत,
देश देशक राष्ट्र नायक संग कएल विचार,
होअओ कहुना शान्ति स्थापित,
होअओ कहुना बन्द नर संहार !
के बुझए ई शान्ति वार्ता,

के सुनए आक्रोश ?
कूटनीतिक सड़ल दलदलमे फँसल मदहोस
राष्ट्रनायक, क्षुद्र सीमित स्वार्थ साधन जन्य,
मुख-मधुर विष-कुम्भ, पाप जघन्य
करथि, बाजथि शान्ति,
पठबथि शस्त्र-सज्जित युद्ध-पोत, विमान,
दमन चक्रक हेतु,
बाजथि -- ‘शान्ति चाहिअ, रुकओ ई जन क्रान्ति,
होएत बात विचार–
शान्त भए हम करब बात विचार’,
बाहरे संसार, बाहरे संसार !!

तखन ठानल युद्ध पाकिस्तान—
अन्य राष्ट्रक बलें, भ्रष्ट विवेक,
धर्म्म, नीति विरुद्ध ई संग्राम—
बुझल छल परिणाम,
सत्य धर्म्मक विजय निश्चय ।
मात्र चौदह दिवसमे दुर्दान्त
‘खान’क होश भए गेल शान्त,
रहल वश इतिहासमे अंकित एकर दुर्नाम ।

भेल मुक्त, स्वतन्त्र बङ्ला देश
स्वस्थ चित्त स्वतन्त्र भए ओ कोटि नर समुदाय
गेल निज गृह ग्राम, अपन प्रदेश,
अपन सोनाक बङ्ला देश।
सभक मुह पर विजय-हर्षोन्मेष,
जयति भारत, जयति बङ्ला देश,
जयति भारत जयति बङ्ला देश।
भारतक शुभ मधुर ई व्यवहार—
देखले संसार !
देख ले संसार !!

विद्यापति

विद्यापति !
सुर भारतीक साधक महान,
अहँ बूझि मातृभाषाक मान
उद्घोष कएल—'देसिल बअना सभजन-मिट्ठा'
रचल जन-भाषामे कविता वितान,
साहित्य गगनमे उदित भेल जनु नवल चान।
शुभ कीर्ति-लता पसरल भूपर,
मुखरित सभ थल कल यशोगान !!

कवि विद्यापति, कवि कण्ठहार !
प्रेमावतार राधाकृष्णक
लीला प्रसंग आधार पाबि,
दुइ प्रेमी हृदयक सम्वेदन
शुभ मिलन, विरह, अभिसार
भाव लए अगनित कोमल गीत गाबि,
शृङ्गारक रससँ संसेचल देशक अंचल;
मैथिली-काव्य-कानन मुकुलित, आएल वसन्त,
कवि-कोकिल-काकलि-मृदु-गुंजित छल दिग्दिगन्त ॥

कविपति विद्यापति, भक्त प्रवर,
अहँ असुर भयाउनि वरद भैरविक सुत सेवक,
खल-दल-दालिनि दुर्गाक भक्ति-ऊर्म्मिल भावुक,
हरिहरक संग तादात्म्य राखि
सुरमौलि ईश पद चंचरीक,
रचि, गाबि नचारी, नाचि नाचि
भोलानाथक अहँ मोहल मन,
बनला शंकर 'उगना' किंकर ।
त्रिभुवन-तारिणि-तट बालुक कण
सुखसार अहँक हित छल संतत;
निश्छल मन, श्रद्धा भक्ति-बद्ध
अइली' जननी गंगा अपनहि,
कलकल छलछल नवधार बहल,
शुभ कातिक धवल त्रयोदशि तिथि,
त्यागल शरीर नश्वर; भूपर
गाथा अहाँक भए गेल अमर,
वाणी अहाँक रहि गेल मुखर
कविपति विद्यापति, भक्त प्रवर !!

सान्ध्य–प्रभात–तारा

धूलि धूसरित म्लान
पश्चिम आकाशमे—
एकमात्र नक्षत्र
आँचर तरक दीप जेकाँ
क्षीण किछु प्रकाश दैछ,
हमरा हृदयमे होइछ सोत्सुक उल्लास ।
प्राची दिशामे ओएह
जागृति-ज्योति-दूत बनि
दीपित प्रभात तारा
हमरा करए हाय ! शंकित, हताश !!

जेठक दुपहरिआमे

जेठक दुपहरिआमे—

छाहरिमे एक सए पन्द्रह अंश तापमान,
धह धह धह जरैछ
आकाश म्रियमाण,
तप्त अछि धरातल अरु लहकैत पवमान,
धू धू धू दौड़ि रहल विद्युत-गति रेलयान।
ब्वायलरक भट्ठी कें खोलि कए देखै' अछि
चालक, खलासी पुनि पाबि कए इसारा बस—
झोंकैत' छि कोइला-आ' धधकैत'छि आगि,
प्रेसर बढ़ाबक छैक
बढ़ाबक छैक तापमान।

आगाँ रेल पथ पर दृष्टि,
चिलमिलाइत लू'क लहरि,
जलाशय सन भासमान
मृग-तृष्णा गतिमान—
बढ़ि रहल आगाँ दिशि,
बढ़ि रहल रेल यान ....।

ग्रीष्म-ताप-निर्लिप्त निर्जीव रेल,—किन्तु
जीवन्त चालक गण
सहज भाव कार्य्यरत, सहज भाव सावधान,
जेठक दुपहरिआमे।

जेठक दुपहरिआमे—
घड़िआ पहिरने बस
छौंड़ा किछु चभच्चामे
बोहिआइत पशुकें
धोइत'छि रगड़ैत'छि,
डाँड़ भरि गर्म्म सड़ल गन्हकैत पानिमे;
महिसे सन सुकोमल
चमड़ा आ' रङ्ग एकर,
बुद्धि ज्ञान क्रमश:
ओहने भइए जेतैक ....
गुदानै' छन्हि सूर्य्यक प्रखरतर तापकें कि
लह लह पुरिबा वा पछबाक झरकी कें?
कहुखन किलकारी दैत
कहुखन पिहकारी दैत,
चुभकैत'छि मस्त भेल
जेठक दुपहरिआमे।

जेठक दुपहरिआमे
खेसाड़ीक बसिया रोटीक एक टुकड़ी खाए,
पहर पहर धरि खेत आरि धूर बउआइत,
घास छिलैत अपस्याँत,
तप्पत तन, तबधल मन,
छिट्टा माथ पर उठाए
छौँड़ी एक अबइत अछि,
ठाढ़ि भेलि विलमइत'छि,
छाड़ैत'छि निश्वास ....
देखैत'छि लोलुप दृष्टि
दश बीस पाकल काँच,
जामुन खसल कारी लाल —।
राखिकए छिट्टा अपन,
झाड़ैत'छि धूसर केश,
देखैत'छि दहिना हाथ, दुखाइत ठेला सभ,
घामक टघार गाल छाती बाँहि पर छलैक
अपनहि सुखाए गेल—
अनुपतन यौवन,
बस डाँड़मे लपेटल छैक

फाटल पुरान मैल साड़ीक टुकड़ा छोट—
बीछैए खाइए मटिआएल जामुन,
ताकि केओ गरजै छथि—
के थिकेँ ? के थिकेँ ? गाछो सँ भाग,
तोँ बीछै छेँ आम ?
भिनसरसँ एखन धरि आइ जालिओ भरल अछि नहि,
गाछीस भाग ने त ....
सहमि कए ठाढ़ि होइछ,
लए लैछ दुइ गोट,
दबा लैछ गाल तर,
पाछाँ मुड़ि जाइत अछि,
उठबैत'छि घास अपन,
पकड़ैत'छि बाट अपन,
दहकैत रौद अरु लहकैत पुरिबामे ....
जेठक दुपहरिआमे।

जेठक दुपहरिआमे—
सतमहला कोठा केरि
तेसर महल पर शान्त
वातानुकूलित कक्ष, सुसज्जित परिवेश।

हे दश बजेसँ आइ
साहेब अतिव्यस्त छला'
दू दू टा मीटिङ छलन्हि .... ।
एखने त 'लाइट लंच'—लघु भोजन लेलन्हि अछि ।
कॉफी सङ धूम्र-पान
समकिछु समापन कए
सोफा पर 'सिस्ता' मे—
साहेब सुस्ताइत छथि
जेठक दुपहरिआ मे ।

कौआ

कौआ,
थोड़मे परिचय हमर ?
—एक वर्ण कारी रंग
कंठ किछु धूसर,
तेज मेही चोँच, चाङुर
आओर काँओ-काँओ कर्कश स्वर ।
शुद्धाशुद्ध निरामिष वा आमिष कोनो वस्तु—
सभ किछु अछि भक्ष्य,
सभ किछु अछि आहार,
अनादर अरु दुर-दुर दुर
सभ थल तिरस्कार ।
चकुआइत बैसैं छी
कूदैं छी, फुदकैं छी
दूर ल'ग उड़ैत छी
भरि दिन बउआइत छी,
कहुना कए जिबैत हम
जिबैत छी वेशी दिन—
किन्तु कहुना कए जिबैत छी ।

छल कपट जानी नहि,
स्पष्ट हमर व्यवहार ।
जरए जखन जखन ब पेट—
कीड़ा मकोड़ा वा सड़ल गड़ल ऐँठोक्ठ
किछुओ छिड़िआएल नहि—
भेटए जखन बाड़ी बा आङनमे,
तखने झपट्टा मारि
लोल भरि लैत छी;....
तखन नहि बूझी जे
ककरा आगाँक हम
छीनल अछि ग्रास,
वृद्ध वा बालककेँ
कएलहुँ अछि हताश !

इएह त जीवन अछि;
कुकरोसँ दीन हम ?
आश्चर्य !
भयंकर नख-दन्त
सभ रूपेँ अशुचिकर ओ—
(भेला सँ बताह त ....)

तकरा त सभ्य लोक
स्नान, खान-पानसँ
शिक्षित बना लैछ,
ओकरा पर दैछ गृह परिवारक रक्षा-भार !
हमरा की ?
बूझल अछि ?
हम अपन गर्भस्थ अंडाकेँ जन्म दए
सेबी कत कष्ट काटि;
(माएक ममता त जानल अछि सभकेँ !)
तखन ओ राक्षसी
कोइली चोरा कए आबि
खसा कए मारि दैछ निरपराध बच्चा हमर,
राखि दैछ अंडा अपन,
निर्लिप्त विहरैत'छि
कुचरैत'छि, कुहकैत'छि
पबैत अछि प्रशंसा वेश,
सुन्दर सुर-लहरीसँ !
केओ नहि दुत्कारै' छै' क्रूर ओकर कर्म्मकेँ,
केओ नहि बूझए हमर

कुही कोखि-मर्म्मकें ।

अनकर की बात कहब ?
परम पुरुष रामचन्द्र—
देखल जे बालक रूप
निश्छल मन, रूप-लुब्ध चित्त हमर,
स्वयं देथि ओदन दधि,
अपन मुहक पकमान,
मुग्ध कएल केहन हुनक बाल-सुलभ मुसुकान !
सएह जखन ज्ञानवान
क्षुब्ध, आवेश वश
फेंकल तृण-ब्रह्म-शर
धृष्ट, दुष्ट, लम्पट पलायित जयन्तक प्रति,—
नहि नहि, क्षुद्र काक प्रति !
इन्द्रक सुपुत्रकें न लागल कलेप,
किन्तु कलपैत काक
वंशगत दंडित भेल,
सर्व्वदाक हेतु ओ एक आँखि वंचित भेल !

मात्र माँ श्यामा ओ धूमावती
राखथि दृष्टि,

सस्नेह करुणा-भाव,
होइ' छथि प्रसन्न ओ काक-वलि देलासँ
धूमावती त अपन रथ पर बैसओने छथि !

सुसंगति पओलासँ, बूझब हमर व्यवहार ?
भुसुण्डीक आचार,
शुचिता, ज्ञान, सुविचार,
श्रद्धा, भक्ति, अञ्चित अछि,
सुर मुनि नर वञ्चित अछि ।

हम की नहि चाहै' छी
सभक हम प्रिय बनी,
यथार्थमे नीक बनी
नीकक प्रतीक बनी ?
दए सकब हमरा अहाँ प्रोत्साहन स्नेहिल यत्न, ?
आनब त ने मनमे किछु वर्ण, जन्म-जाति प्रश्न ?

मृदु मयंक हंस शिशु

आदित्यपुरक उपनगरी—
छोट छीन उद्यान
बङ्लाक आगाँमें, मखमली हरियर दूभि,
एकाकी बैसल हम;
कार्त्तिकी पूर्णिमा
शान्त श्याम आकाश,
प्राची दिशि पूर्ण चन्द्र
ऊपर उठैत क्रमहि
शुभ्रतर द्योतित कर
विकरित करैत—
देखल हम मृदु-मयंक।
नारिकेल-हरिताभ-
पत्र-जाल आबद्ध
पिञ्जरस्थ हंस शिशु !
आदि कविक कल्पना—
[लङ्काक उद्यान,
सीता-अन्वेषण-रत राम-दूत हनुमान
देखैत पूर्ण चन्द्र नील-नभ-भासमान]
विभोर भेल जाइत छलहुँ,"

अकस्मात् ब्लास्ट-फर्नेसक उत्तप्त धूम
लोहित धूसरित गैस
क्रूर राक्षसक भयंकर उच्छ्वास जेकाँ
झौंसि देलक आकाश,
क्षार कए देलक हमर मानस-मरालकेँ।
ई की व्याघात !
काम-क्रीड़ारत क्रौञ्चकेँ
क्रूर-बाण-विद्ध देखि
अभिशाप स्फुटित भेल—
'प्रतिष्ठा नहि पएबें तोँ
नीच व्याध चिर काल।'
बहराएल मुखसँ—आह !
हन्त आइ महायंत्र
मानवकेँ शान्तिसँ रहए नहि देत,
ई प्रतिष्ठित नहि करए देत
भूतलपर कोमल भाव !

ओ गाछ

केहन छल ओ गाछ ।

बड़का ओहि पाँतरमे
बाटहिक कातमे,
केहन छल सपल्लव,
झमटगर केहन डारिपात ।
अदम्य एकर अन्तः-शक्ति
दृढ़ता उर्ध्वगामी दृष्टि,
स्वबल-संरक्षित ई
विकटतम परिस्थितमे
एकाकी बढ़ल गेल, पसरल गेल, ऊँच भेल—
वृहत् एहि पाँतर मे ।

असंख्य चिड़ै चुनमुनीक
रहै छलै' आवास,
थाकल ठेहिआएल पथिक
पबै छल अनायास
स्नेह भरल शीतल छाह ।

साधु वा असाधु,
दुष्ट वा शिष्ट होअओ,
सभक हेतु वरद हस्त,
सभक हेतु मुक्त हस्त,
ढेप वा झटहा चलओलो पर दैत छलै'
मधुर सुस्वादु फल !
सएह त थिकैक, नीक गाछक असल धर्म्म ।

इहो छल नीक,
इहो छल विशाल,
इहो छल महान ।
आ' ताही पर अचानक खसलैक ठनका !
भयंकर बज्रपात !
ई की भेल ?
ई कोना कएल गेल ?
शून्य भेल पाँतर आ' स्तब्ध भेल देश कोश ।

विधिक ई विधान ?
नियतिक ई निर्णय ?
ककरा की कहबै,
ककरा की कहल जाए !

परिशिष्ट

कविता सभहिक रचना-काल, स्थान तथा किछु टिप्पणी।

१. सूर्य्य—मेष संक्रान्ति, अप्रील १९३६ ई०; पटना।
२. निर्झर-नीर—जुलाइ १९३८ ई०; पटना।
भारत-भारत-क्लान्ति (पं० ६) महाभारतमे अर्ज्जुनके जे क्लान्ति भेल छलन्हि।
३. वनफूल—सेप्टेम्बर '४२ ई०; पटना।
४. शिशिर मेघ—फरवरी '४४ ई०; सिरका, रामगढ़।
किन्तु.........असहाय (पं० ८-९) धान काटि लेलाक बाद पृथिवीक रूप।
५. विद्यापतिक मृत्यु—कार्त्तिक शुक्ल त्रयोदशी '३९ ई० पटना। ओही संध्याकाल पर्व्व-समारोहमे पठित।
६. हरिद्वार (१), (२)—जून १९४० ई०; खरड़ख (मधुबनी);
७. वसन्त—अप्रील १९४१ ई०, पटना।
८. जय भारत—१५अगस्त १९४७ ई०; सिन्द्री।
९. शारदा विजय—अक्टूबर १९४८; सिन्द्री।
१० मानभूमि—फरवरी १९५०; सिन्द्री।
११. कातिक धवल तिथि त्रयोदशि—अक्टूबर १९५२; गया।

१२. जरत्कारु उपाख्यान—मार्च १९५४; गया ।
महाभारत आदि पर्वसं मूलक अधिकांश अनुवाद । निन्न तोड़बाक कारणें ऋषिक क्रोध, सती जरत्कारुक प्रार्थना तथा जरत्कारु ऋषिक उत्तर, आश्वासन किछु नूतन रूपँ कल्पित ।

१३. सौन्दर्य-बोध—दिसम्बर १९६६ ई०; राँची

१४. प्रतीक—मार्च १९६७ ई०; राँची ।
संयत्र—बड़का कारखानाक 'चिमनी' पर रचित ।
(पं० ११-१५) बज्रलेप–सिमेंट, सिकताकण-बालु, उपलचूर्ण-पाथरक गिट्टी - 'स्टोन चिप्स'—कंक्रीट बनएबाक उपकरण ओ प्रक्रिया ।
झंझा—वर्षाक संग तेज बसात; आसार-मुसलाधार वृष्टि ।

१५. रिक्त : सर्व्वो भवति हि लघु :-अक्टूबर १९६७ ई०, राँची । कालिदासक मेघदूतक एक पद्यांश । अभ्र, वारिवाह, स्तनयित्नु—मेघक नाम ।
जनगणमन पर्व्वलीन (पं–७५) शरद समय मे बहुतो पर्व्व होइछ।

१६. लागल अछि कुहेस—दिसम्बर १९६७ ई०, राँची ।
'कज्जलक पहाड़ ···· कलिन्द तनया सदृश' (पं ४७–४९)
वर्ण - रत्नाकरमे अन्धकार वर्णनक अनुच्छाया ।

१७. मेहक बड़द जेकाँ—तिला संक्रान्ति; । १९६८ राँची;
ज्योति-गतिवर्गक .... (पं. २३) — ऊर्जा (E)=द्रव्य × ज्योतिगतिवर्ग (MC²) —आँइस्टाइनक सिद्धान्त ।

१८ हत्या—१७-४-६८, राँची । मार्टिन ल्यूथर किंगक हत्या पर
क्रिश्चियन सभहिक अनुसार ईश्वरसँ विद्रोह कर' वाला 'डेभिल', 'शैतान' सृष्टि मे अशान्ति एवं पापात्माक प्रवृत्ति केँ भड़कबैछ, एहि मे ओकरा आनन्द भेटैत छैक । 'शैतान'--सापक रूप धए पहिल मानवकेँ कनफुसकीसँ प्रलोभन देने छलन्हि । ईशा—ईश्वरक पुत्र कहल जाइत छथि । क्रुश-विद्ध-हुनका काँटी ठोकि कए मारि देने छलन्हि; ओ अपन रक्तसं मानव समूहक पापकेँ धोएने छलाह । (पं ८४)—'किंग'क एक प्रमुख भाषणमे बेरि बेरि कहल गेल—'I have a dream'

१९. अभिनन्दन—२१-७-६९ ई०, पटना ।

२०. आउ दुर्गे-नृत्य-गीत; महाष्टमीक राति, १९६९ ई०, पटना ।

२१. अन्तरिक्ष-यात्री—मार्च १९७०, ई० पटना ।

२२. बाहरे संसार, देखले संसार—दिसम्बर १९७१ ई०,पटना ।

२३. विद्यापति —कातिक १९७२, पटना ।

२४. सान्ध्य-प्रभात-तारा :—मार्च १९७३, पटना ।
ओएह शुक्र ग्रह सन्ध्या आ प्रातः दूनू काल उगैत छथि । कविता–नायिकाक उक्ति ।

२५. जेठक दुपहरिआमे—जून १९७४, पटना ।

२६. कौआ—सेप्टेम्बर १९७४, पटना ।
(पं० ७२-७३) भवान् तस्याक्षि काकस्य हिनस्तिस्म स दक्षिणम्
तदा प्रभृति काकानामेकमक्षि विधीयते । वा. रा

२७. मृदु-मयंक हंस शिशु—नवम्बर १९७४, पटना।
(पं १४)-हंसो यथा राजत पंजरस्थ : वा. रा. सु० काण्ड।

२८. ओ गाछ—जनवरी १९७५, ई० पटना।
श्रद्धेय ललित बाबूक निधन पर रचित।